स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–22, अंक–7, आषाढ़–श्रावण 2071, जुलाई 2014

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा – पृष्ठ–6

मनरेगा के पैसे को भी धीरे–धीरे कृषि के लिए बने बजट में शिफ्ट कर दिया जाएगा। यही बात वित्तमंत्री ने खाद्य सुरक्षा के मामले में भी किया है। सप्रंग सरकार द्वारा लागू सबको भोजन के अधिकार को . . .

कवर पेज

अ नु क्र म

आवरण कथा :
अपेक्षाओं के दबाव का बजट
– विक्रम उपाध्याय /6

पशुधन : घटता पशुधन का प्रभाव अर्थव्यवस्था पर
– शिवानन्द द्विवेदी /9

कृषि : सूखे से मुकाबले का तरीका
– देविन्दर शर्मा /11

अर्थव्यवस्था : नई सरकार के लिए आर्थिक मॉडल
– डॉ. भरत झुनझुनवाला /13

श्रमिक : मजदूर हितों की न हो अनदेखी
– भारत डोगरा /15

समस्या : भीख माँगने में खोता बचपन
– पंकज चतुर्वेदी /17

विमर्श : केवल घर नहीं उन्हें समाज चाहिए वहां
– जवाहरलाल कौल /19

सामयिकी : मुखौटे से अधिक नहीं चीन का 'पंचशील'
– प्रमोद भार्गव /21

अभिमत : दक्षिणायन हिन्दी
– प्रवीण गुगनानी /23

पर्यावरण : बढ़ते तापमान वृद्धि से बढ़ रही मुश्किलें
– शशांक द्विवेदी /25

स्वास्थ्य : धुएं में उड़ता बच्चों का भविष्य
– अरविन्द जयतिलक /27

धरोहर : निर्मल गंगा की नई उम्मीद
– मनोज मिश्रा /29

दृष्टिकोण :
आर्थिक विकास के साथ नैतिक, आध्यात्मिक व पर्यावरण विकास जरूरी
– सतीश कुमार /31

पाठकनामा/4, समाचार परिक्रमा/33, रपट/36

पाठकनामा

निर्मल गंगा कब होगी

हम सब जानते हैं कि गंगा हमें धरोहर के रूप में मिली है। आज हमने अपने निजी स्वार्थों के कारण इसको मैली कर दिया है। राजीव गांधी ने सर्वप्रथम गंगा अभियान की शुरूआत की थी परन्तु आज तक निर्मल गंगा नहीं हो सकी है। हमने भी कई बार इसे स्वच्छ व निर्मल रखने के लिए शपथ ली है और हर बार इसे मैली करते जा रहे है। भाजपा सरकार ने निर्मल गंगा अभियान की शुरूआत कर दी है। हमें भी इस कदम में एक कदम आगे बढ़ना होगा अर्थात् कोई भी चीज प्रवाहित ना करें, जो इसके पानी को किसी भी तरह से प्रदूषित करता हो। जिस दिन सब लोग इस राह पर चल पड़ेंगे गंगा का पानी एक बार पुनः निर्मल हो जाएगा।

– गजेन्द्र सिंह, मण्डल, गोपेश्वर, उत्तराखण्ड

जैव खेती आज की जरूरत है

जैविक खेती पर जून माह में अरुण के. शर्मा का लेख पढ़ा। लेख अच्छा था आज देखा जाए तो जैव खेती को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया करनी चाहिए। परन्तु सरकार द्वारा अभी भी जैव खेती को प्रोत्साहन कम दिया जा रहा है। अरुण के शर्मा जी ने ठीक कहा है कि भारत के जैव खेती कोई नई बात नहीं है वरन् प्राचीन काल से चली आ रही है। मेरे अनुसार जैव खेती को आगे बढ़ना है तो किसानों को जैव खेती करने के लिए जानकारी और आर्थिक सहायता देनी चाहिए आज जो किसान अधिक कमाने के लिए नाम पर रसायनिक खेती का प्रयोग कर रहे है वो एक तरह से लोगों को जहर परोस रहे है उन्हें अपनी परंपरागत जैव खेती की जानकारी है फिर भी रयायनिक खेती का प्रयोग करते है इसलिए किसानों जैव खेती की जानकारी उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी राज्य और केन्द्र सरकार की बनती है।

– ज्योति राय, बिहार

जनता को उम्मीद है मोदी

मोदी सरकार को सत्ता में आए डेढ़ माह हो चुका है। देश के गरीब किसानों के साथ–साथ श्रमिकों ने भी आस लगा रखी है कि कांग्रेस सरकार जैसी भूल भाजपा सरकार नहीं करेगी। कांग्रेस सरकार ने दस सालों के दौरान महंगाई, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद के अलावा देश को कुछ नहीं दिया। महंगाई बढ़ने के कारण आम आदमी अपनी जरूरतमंद चीजों की भी कटौती करता रहा। जिसके कारण चुनाव में यूपीए की बुरी हार हुई। अभी भी महंगाई थम नहीं रही है फिर भी लोगों को मोदी सरकार से काफी उम्मीद है। **मनोज कुनियाल, सेक्टर–3, आर.के. पुरम्**

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 15

आजीवन सदस्यता शुल्क:15,00 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित क र ।

या आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740

IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram)

उन्होंने कहा

सुशासन और नरेन्द्र मोदी की लोकप्रियता ने भाजपा को जीत दिलाई।

– राजनाथ सिंह

यमुना की सफाई किए बिना गंगा को पुनर्जीवित करने का काम पूरा नहीं होगा। गंगा पुनरोद्धर परियोजना का यमुना भी शामिल है। देश तभी समृद्ध होगा जब ये यमुना और गंगा दोनों नदियां प्रदूषण मुक्त होंगी।

– उमा भारती

मैं जम्मू एवं कश्मीर के नागरिकों का दिल जीतना चाहता हूँ। यह कार्य विकास के माध्यम से ही पूरा होगा।

– प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी

रेलवे की हकीकत सामने रखने के लिए पीएम व रेलमंत्री की सराहना करती हूँ।

– जयललिता

रेलमंत्री ने बातें तो बड़ी–बड़ी कर डाली। मगर घाटे वाली रेलवे को आधुनिक कैसे बनाएंगे।

– मायावती

देश को विकास की ओर ले जाने वाला बजट।

– सुब्रत के. मंडल अर्थशास्त्री

देश को विकास की ओर ले जाने वाला बजट।

– सुब्रत के. मंडल अर्थशास्त्री

भाजपा सरकार द्वारा बजट 2014–15 में कुछ नया नहीं है। बजट में सिर्फ हमारी यूपीए की नीतियों को आगे बढ़ाने का काम किया है।

– सोनिया गांधी

जो नेता बजट की आलोचना कर रहे हैं उन्होंने संसद में बजट की घोषणा होने से पहले ही अपनी टिप्पणी तैयार कर रखी थी।

– अनुपम खेर

संपादकीय

कड़वी घूंट सिर्फ जनता के लिए क्यों?

देश की अर्थव्यस्था को पटरी पर लाने के प्रयास में लोगों से थोड़ी कठिनाई सहने की गुहार सरकार कर रही है। यह सही है कि यूपीए सरकार के दस साल का कुशासन आज भी आर्थिक बदहाली के लिए जिम्मेदार है। लेकिन सवाल यह भी उठ रहा है कि आखिर जनता कितने दिन कड़वा घूट पिये। सरकार की दलील के मजबूत आधार भी हैं। पहला यह कि व्यवस्था संभालने तक चीजों के दाम बढ़ाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। दूसरा बाहरी और आसमानी कारण लंबे समय तक हावी रहते हैं तो सरकार के पास सीमित विकल्प हैं। सरकार का कहना है कि तेल और रेल का बोझ जनता पर डालने के अलावा उसके पास कोई विकल्प नहीं है। इराक में लड़ाई चल रही है उसका असर कच्चे तेल पर पड़ रहा है और रेल की हालत इतनी जर्र जर्र हो चुकी है कि उसका खर्च चलाना मुश्किल है। बात कुछ हद तक सही भी है। 70 फीसदी आयातित तेल पर निर्भर भारत के लिए बाहरी कारकों से बचना संभव नहीं है। इस मामले में कड़े फैसले लेने ही पड़ेंगे। आने वाले दिनों में हमारे लिए स्थितियां और बिगड़ने वाली है। पूरी दुनिया में चीन और भारत ही ऐसे दो देश हैं जहां पेट्रोलियम की खपत लगातार बढ़ रही है। हमारा आयात बिल लगाता बढ़ता जा रहा है। कई बार यह भुगतान संतुलन के लिए खतरा बन चुका है। हमारे पास क्या विकल्प है। इस पर कोई नीति या पहल नहीं हुई है। हमने पेट्रोलियम पदार्थों की खपत कम करने का कोई लक्ष्य अभी तक निर्धारित नहीं किया है। हमने आयात व्यवस्था में वैकल्पिक ऊर्जा के उपयोग का कोई रोडमैप तैयार नहीं किया है। पेट्रोलियम पदार्थों के उपयोग पर हमें कड़े फैसले की जरूरत है। सरकार यह जानती है कि 70 फीसदी डीजल और 99 फीसदी पेट्रोल का उपयोग सिर्फ और सिर्फ परिवहन क्षेत्र में होता है। इनमें भी लगभग 30 फीसदी डीजल महंगी कारों और यूटिलिटी वाहन में उपयोग होते हैं। पेट्रोल की लगभग पूरी खपत दो पहिया वाहनों या छोटी कारों में है। अकेले उड़ीसा, बिहार और राजस्थान में 70 फीसदी पेट्रोल का उपयोग दुपहिया वाहनों में हो रहा है। यह जानकर आश्चर्य नहीं होता कि सिर्फ 13 फीसदी डीजल का उपयोग कृषि क्षेत्र में होता है। उद्योग तो सिर्फ 9 फीसदी डीजल का प्रयोग करता है। आज भी डीजल पर लगभग तीन रुपये प्रति लीटर की सब्सिडी है। क्या सरकार को इस क्षेत्र में कड़े फैसले की जरूरत नहीं है। पेट्रोलियम क्षेत्र में सब्सिडी खत्म कर बाजार रेट पर महगे पेट्रोल डीजल मुहैया कराना हल नहीं है। सब्सिडी हटाने का भार भी आम आदमी पर ही पड़ना है। सरकार के सामने कड़े फैसले इसके उपभोग को कम करने का हो सकता है। राज्यों में सस्ते यातायात के साधन जब तक विकसित नहीं होते तब तब तेल के बोझ को कम नहीं किया जा सकता। लेकिन इस ओर न तो राज्य सरकारों का ध्यान है और न अभी तक केंद्र सरकार का।

इस बार मानसून की कमी की भी आशंका है। भू–विज्ञानी पहले से ही चेता रहे थे और अब आकड़े भी आ गए हैं कि हमारा जल स्तर तेजी से नीचे जा रहा है। कहीं कहीं भू–जल स्तर चार मीटर से भी नीचे खिसक गया है। कहा जा रहा है कि देश में इस बार सूखा पड़ सकता है। मानसून में 33 फीसदी से भी कमी आ सकती है। यानी देश में खाद्यान्न और सब्जियों की अकाल पड़ सकती है। अभी से ही सब्जियों के दाम रोजाना बढ़ रहे हैं। सरकार यदि समय रहते अकाल से लड़ने की व्यवस्था नहीं करती तो हालात काबू से बाहर हो सकते है। इसी तरह इराक में युद्ध लंबा चल सकता है। सीरिया और अन्य इस्लामिक देश भी इसकी चपेट में आ सकते है। ऐसी स्थिति में पेट्रोलियम आपूर्ति सुनिश्चित रखने की व्यवस्था तत्काल जरूरी है। मानसून में देरी और अंतरराष्ट्रीय टकराहटों का भुगतान जनता को न करना पड़े यह सुनिश्चित सरकार को पहले ही कर लेना चाहिए। कड़े फैसले सरकार के ढ़ांचे और नीतियों को लेकर भी हो सकते है। तभी देश के आर्थिक हालात सुधर सकते है। नीतिगत फैसलों में सबसे अधिक जरूरत है जनसंख्या पर नियंत्रण या बढ़ती जनसंख्या का उचित प्रबंधन। देश दोनों स्थितियों में विफल साबित हुआ है। न तो हम आबादी को काबू में रख सके और न बढ़ती आबादी को शिक्षा, रोजगार और दिशा दे सके हैं। यह सही है कि भारत युवा शक्ति की दृष्टि से चीन से आगे है, लेकिन यह भी सच है कि आज 25 से 30 आयु वर्ग में 18 प्रतिशत युवा बेरोजगार हैं। अनुपयोगी हाथ सामाजिक उथल–पुथल के कारण बन सकते है। सरकार को इस मामले में कड़े फैसले लेने हैं कि देश की जनसंख्या पर नियंत्रण करना है या संभावनाओं और सुविधाओं का विस्तार। समस्याओं में उलझा देश इस पर आसानी से फैसला नहीं कर सकता। इस मामले में नीतिगत फैसला जल्दी नहीं लिया गया, तो देश में खाद्यान्न की समस्या, नागरिक सुविधाओं की समस्या, बेरोजगारी की समस्या और इन सबके साथ कानून व्यवस्था की समस्या विकराल रूप धारण कर सकती है और एक अशांत देश तरक्की के रास्ते पर सरपट नहीं चल सकता।

अपेक्षाओं के दबाव का बजट

मनरेगा के पैसे को भी धीरे–धीरे कृषि के लिए बने बजट में शिफ्ट कर दिया जाएगा। यही बात वित्तमंत्री ने खाद्य सुरक्षा के मामले में भी किया है। सप्रंग सरकार द्वारा लागू सबको भोजन के अधिकार को अक्षरसः लागू करने के देरी का बहाना बना गरीबों में भी अधिक गरीब तक अनाज की आपूर्ति सुनिश्चित करने की अतिरिक्त व्यवस्था इस बजट में कर दी। कुल मिलाकर इस बजट में आकड़ों की बाजीगरी करने के बजाय आशा और उत्साह का माहौल तैयार करने की कोशिश वित्त मंत्री ने की है. . .

■ विक्रम उपाध्याय

मोदी सरकार का पहला बजट चुनाव प्रचार के दौरान किए गए तमाम वायदे और दावे को पूरा करने का प्रयास है। काम से सरकार की प्रभुता सिद्ध करने की मोदी के मंत्र को वित्तमंत्री अरुण जेटली ने चुनौती के रूप में लिया और वे वायदे भी कर दिए जिनके पूरे होने में अर्थशास्त्री शंका जताते हैं। नरेन्द्र मोदी ने अपने चुनाव भाषण में जिन खास वायदों को जनता के सामने रखा था उनमें से अधिकतर को पूरा करने का बीड़ा अरुण जेटली ने उठाया है।

महंगाई की आंच कम महसूस हो इसके लिए आय कर की सीमा बढ़ाई और अन्य करों में छूट प्रदान कर भारत के मध्य आय–वर्ग की अपेक्षाओं को पूरा कर दिया। यानी पचास हजार रुपये की मासिक आय वाले चाहे तो कर देने से बच सकते हैं। चुनाव के दौरान मोदी ने यह वायदा भी किया था कि दाम बढ़ने से बाजार में उथल–पुथल न मचे इसके लिए एक विशेष कोष बनाया जाएगा। वित्त मंत्री ने 500 करोड़ के इस कोष की घोषणा कर दी। मोदी ने यह भी कहा था कि देश में 100 नये शहर बनाए जाएंगे, यह भी वायदा आज पूरा कर दिया गया। इसके लिए भी लगभग सात हजार करोड़ की योजना बना डाली गई। यहीं नहीं 500 मौजूदा शहरों के विकास के लिए भी भारी रकम का ऐलान किया गया। पिछले बजट में शहरी ढांचागत सुविधा के लिए 7548 करोड़ रुपये का प्रावधान था पर अरूण जेटली ने इसमें 133 फीसदी बढ़ाकर 17 628 करोड़ रुपये का प्रावधान कर दिया। इलाहाबाद और लखनऊ में मेट्रो के लिए 100 करोड़ के प्रावधान की घोषणा के साथ ही वित्तमंत्री ने यह भी ऐलान कर दिया कि 20 लाख से अधिक की आबादी वाले सभी शहरों के लिए मेट्रो ट्रेन चलाई जाएगी।

करों व शुल्कों में समायोजन कर कई सारी वस्तुओं के दाम कम कर दिए गए हैं। लेकिन उनका असर बाजार पर कितना दिखाई देता है यह देखना दिलचस्प होगा। क्योंकि 19 इंच से छोटे टेलीविजन, 1000 से कम के जूते, ब्रांडेड फूड पैकेजिंग और स्टील के बने सामान का बाजार बहुत बड़ा नहीं है। इसके उलट सेवा कर का लक्ष्य बढ़ाना, म्यूचुअल फंड में लाभ पर से केपिटल गेन टेक्स की छूट हटाना और ऑटो तथा अन्य एक्जलरी उद्योगों के लिए कोई विशेष पैकेज की घोषणा नहीं करने से कहीं न कहीं मायूसी है। हां इलेक्ट्रॉनिक व कुछ अन्य जुड़े उद्योगों को बढ़ावा देने की वित्त मंत्री की घोषणा से चीन से लोहा लेने वाले निर्माण उद्योग की कंपनियों का हौसला जरूर बढ़ा है।

यहीं नहीं देश में नए औद्योगिक शहर बनाने के भी मोदी के चुनावी वायदे को अमली जामा पहनाने की पहल इस बजट में हो गई। प्रधानमंत्री के दिल के

करीब गंगा और बनारस के लिए भी बजट में विशेष प्रावधान कर दिए गए। राम मंदिर की तरह गंगा के नाम पर भी अनिवासी भारतीयों को जोड़ने का प्रयोग किया गया है। यानी गंगा के लिए विशेष एनआरआई फंड की घोषणा इस बजट में की गई है। एक तरफ वित्तमंत्री ने गंगा, बनारस और पटेल की मूर्ति जैसे वे उन योजनाओं को दिल खोलकर समर्थन दिया है, जो प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के दिल के करीब रही हैं। दूसरी तरफ यह भी ख्याल रखा है कि अल्पसंख्यक मुस्लिमों को भी कहीं से नाराजगी न रहे। बनारस में बुनकरों के लिए 50 करोड़ और मदरसों के विकास के लिए 100 करोड़ का अतिरिक्त कोष का ऐलान सेकुलर इंडिया को संतुष्ट करेगा। यहीं नहीं अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय को भी पिछले वर्ष के मुकाबले इस वर्ष 5 फीसदी अतिरिक्त धन का प्रावधान किया गया है।

बजट के जरिए देश की अर्थव्यवस्था का कायापलट करने के दबाव ने वित्तमंत्री को कुछ अतिरिक्त जोखिम लेने पर भी मजबूर कर दिया है। अर्थशास्त्री बता रहे हैं कि वित्तीय अनुशासन को लेकर की गई घोषणाएं हवाई साबित हो सकती हैं। सबसे अधिक शंका राजकोषीय घाटे को काबू में लाने को लेकर की गई वित्त मंत्री की घोषणा को लेकर व्यक्त की जा रही हैं। अरुण जेटली ने अपने बजट भाषण के दौरान कहा कि मैं राजकोषीय घाटे के 4.1 फीसदी के स्तर पर लाने की चुनौती स्वीकार करता हूं। वर्तमान हालात में यह घोषणा जोखिम में डालने वाली हो सकती है। एक तरफ विकास के लिए भारी सरकारी खर्चे का फैसला और दूसरी तरफ राजकोषीय घाटे को नियंत्रित रखने की चुनौती आपस में विरोधाभाषी हैं। विशेषज्ञ ऐसा हाल के दिनों के परिणाम के आधार पर कह रहे हैं। यूपीए के तेज तर्रार वित्तमंत्री पी चिदंबरम ने 4.5 फीसदी राजकोषीय घाटे का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए विकास की बलि चढ़ा दी थी। न सिर्फ योजनागत व्यय में से 90 हजार करोड़ की कटौती की थी, बल्कि उन्होंने बहुत सारे सरकारी व्यय जिनमें मुख्य रूप से ब्याज का भुगतान था, को अगले वर्ष के खर्चे में डाल दिया था। अब विशेषज्ञ यही जानता चाहते हैं कि अरुण जेटली ऐसा क्या करने जा रहे हैं जिससे विभिन्न परियोजनाओं में सार्वजनिक निवेश हो और राजकोषीय घाटे पर उसका असर भी नहीं हो। खासकर तब और जब यह माना जा रहा है कि इस वर्ष मानूसन में कमी के कारण सूखा पड़ सकता है और इराक में छाये संकट के कारण कच्चे तेल के दाम में और उबाल आ सकता है।

वाजपेयी सरकार की तरह मोदी सरकार ने भी विकास का पहिया ढांचागत क्षेत्र को माना है। इसलिए बजट में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में ढ़ाचागत विकास को लेकर कई महत्वपूर्ण घोषणाएं की गई है। 2022 तक सबको मकान, 35 हजार किलोमीटर का हाईवे निर्माण, 100 नये शहरों का जन्म, 15 नए हवाई अड्डे का निर्माण और ग्रामीण क्षेत्र में भंडारण तथा कृषि बाजार का जाल बिछाने की घोषणाएं अर्थव्यवस्था में जान डालने के उद्देश्य से की गई हैं।

हालांकि अभी कुछ हफ्ते पहले ही यह बात सामने आई थी कि राजस्व का लक्ष्य सरकार विनिवेश के जरिए पूरा करेगी और उसी क्रम में पहले ओएनजीसी के 10 फीसदी शेयर बाजार में बेचकर 35 हजार करोड़ रुपये जुटाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था पर बजट में विनिवेश के जरिए 63 हजार करोड़ का लक्ष्य वित्तमंत्री ने रखा है और वो भी बाकी आठ महीने में । इसलिए वित्तमंत्री से यह सवाल लाजिमी है कि लगभग 9000 करोड़ रुपये की अतिरिक्त राशि वह कहां से जुटाएंगे। पर आश्चर्यजनक बात यह रही है कि वित्तमंत्री ने अपने बजट भाषण में इस पर कोई जिक्र नहीं किया।

हालांकि अचानक दाम में बढ़ोतरी के बाद मचने वाले उथल–पुथल को रोकने के लिए अलग से 500 करोड़ रुपये के कोष की घोषणा इस बजट में कर दी गई है। पर महंगाई खत्म करने का कोई रोडमैप इस बजट में नहीं दिखाई दिया। खाद्य व गैर खाद्य पदार्थों की मुद्रा स्फीति दर में कब तक काबू पाया जाएगा इसका कोई ठोसा प्लान बजट में नहीं दिखा। हां वित्तमंत्री ने यह भरोसा जरूर दिलाया है कि बाजार में चीजों की आपूर्ति कम नहीं होने दी जाएगी, ताकि किल्लत के नाम पर अनावश्यक दाम न बढ़ सके। कई लोग इसे बजट की निराशाजनक बातों में शामिल करते हैं। यहीं नहीं अरविंद केजरीवाल जैसे नेता के लिए इस बजट से यह एजेंडा मिल गया कि मोदी सरकार भ्रष्टाचार रोकने के लिए कहीं से भी प्रतिबद्ध नहीं है, क्योंकि सरकारी स्तर पर भ्रष्टाचार खत्म करन की योजना इस बजट में नहीं दिखी।

वित्तमंत्री जानते हैं कि देश की अर्थव्यवस्था की हालत काफी खस्ता है। इसलिए एक ऐसे बजट का होना जरूरी है जो लोगों की सोच को बदले। रुकी हुई आर्थिक गतिविधियां फिर से चल पड़े और देश में निवेश का माहौल बने। इसलिए

उन्होंने दो ऐसे क्षेत्र में विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाई है, जो अभी तक सुरक्षा और वित्तीय शूचिता के हिसाब से संवेदनशील माने जाते थे। भाजपा खुद भी संवेदनशील क्षेत्रों में विदेशी कंपनियों को आने से रोकने की हामी भरती रही है। वैसे इन दोनों क्षेत्रों में विदेशी निवेश की अपाार संभावनाएं हैं। खासकर रक्षा निर्माण के क्षेत्र में। अमरीका, रूस और फ्रांस जैसे देशों की कंपनियां भारतीय रक्षा बाजार में घुसने के लिए काफी दिनों से प्रयासरत रही हैं। रूके पड़े रियल एस्टेट के लिए विदेशी निवेश की नीति में बदलाव कर काफी हद तक वित्त मंत्री ने राहत प्रदान कर दी है । अब छोटे बिल्डर भी विदेशी निवेशकों के साथ काम कर सकते हैं। अभी तक 50 हजार मीटर की परियोजना पर एक करोड़ डॉलर के न्यूनतम विदेशी निवेश की शर्त थी, इस बजट में इसे घटाकर 20 हजार वर्गमीटर की परियोजना पर भी 50 लाख डॉलर के विदेशी निवेश प्रस्ताव को भी मंजूरी मिल सकती है। यह माना जा रहा है कि सस्ती विदेशी पूंजी से बिल्डर अब अपनी लागत तीस फीसदी तक कम कर सकते हैं।

वाजपेयी सरकार की तरह मोदी सरकार ने भी विकास का पहिया ढांचागत क्षेत्र को माना है। इसलिए बजट में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में ढ़ाचागत विकास को लेकर कई महत्वपूर्ण घोषणाएं की गई है। 2022 तक सबको मकान, 35 हजार किलोमीटर का हाईवे निर्माण, 100 नये शहरों का जन्म, 15 नए हवाई अड्डे का निर्माण और ग्रामीण क्षेत्र में भंडारण तथा कृषि बाजार का जाल बिछाने की घोषणाएं अर्थव्यवस्था में जान डालने के उद्देश्य से की गई हैं। पर इतनी सारी घोषणाओं के लिए धन कहां से आएगा। इसकी व्यवस्था के बजाय इसके जुटाने की कल्पना की गई है। मसलन यह माना गया है कि अधिकतर ढांचागत विकास के लिए निजी क्षेत्रों का सहयोग लिया जाएगा। यानी पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप के आधार पर परियोजनाएं पूरी की जाएगी। इसको लेकर विशेषज्ञों ने शंका जताई है। अभी तक पीपीपी मॉडल भारत में लूट खसूट का उदाहरण बन कर रह गया है। इस पर एक ठोस पारदर्शी नीति की जरूरत होगी। दूसरी शंका निजी क्षेत्र की पूंजी को लेकर है। यह कहा जा रहा है कि निजी क्षेत्र इस समय वित्तीय तरलता के मामले में काफी कष्ट में है। बाजार में पैसे का घोर अभाव है। इसलिए तत्काल उन क्षेत्रों में निजी कंपनियां निवेश करेंगी जहां से पैसे की वापसी लंबे समय के बाद होगी।

विशेषज्ञ मोदी सरकार की मंशा पर कोई सवाल नहीं उठा रहे हैं, पर बजट में जिन आकड़ों का लक्ष्य तय किया गया है, उन्हें वे ख्याली बता रहे हैं। कहा जा रहा है कि जब देश की विकास दर चार फीसदी के आस पास है, तो ऐसे में अगले आठ महीने में राजस्व में 17 फीसदी की बढ़ोतरी कैसे हो सकती है। बजट में राजस्व वसूली में 17 फीसदी वृद्धि का लक्ष्य तय किया गया है। इतनी सारी परियोजनाओं के लिए पैसा कहां से आएगा इस पर सरकार भी ठोस जवाब बजट में नहीं दे पाई है। बकौल अरूण जेटली अभी तक विदेशी या घरेलू निवेशक भारत में पैसा लगाने के लिए तैयार नहीं थे। निवेश का माहौल ही नहीं था। इस बजट से निवेशकों का विश्वास लौटेगा और भारत में निवेश तेजी से बढ़ेगा। लेकिन बजट के दिन ही अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट रेटिंग एजेंसी स्टैंडर्ड एंड पुअर ने कहा कि लंबी अवधि के लिए भारत की रेटिंग में इस बजट के कारण कोई बदलाव नहीं होने जा रहा। यानी अभी भी विदेशी निवेश के आने में हिचकिचाहट रहेगी। यद्यपि मोदी की सरकार के आने के बाद शेयर बाजार में विदेशी निवेशकों का आना जारी है और कहा जा रहा है कि विदेशी संस्थागत निवेशकों के कारण मुंबई का संवेदी सूचकांक 30 हजार को पार कर सकता है।

इस बजट में कुछ राजनीतिक स्कोर करने और सोनिया–राहुल द्वारा बनाई गई योजनओं पर से उनकी छाप हटाने का भी प्रयास किया गया है। खासकर मनरेगा। भाजपा के कई मुख्यमंत्री यह सार्वजनिक घोषणा कर चुके है कि मनरेगा यदि खत्म नहीं किया जा सकता तो इसमें आमूल चूल परिवर्तन जरूरी है। अरूण जेटली ने उनकी इच्छाओं का सम्मान करते हुए मनरेगा की दिशा बदलने की शुरूआत कर दी। इस योजना में धन आवंटन को जस का तस रखते हए, इसके मद को कृषि और पूंजी निर्माण में भेजने का ऐलान कर दिया। यानी मनरेगा के पैसे को भी धीरे–धीरे कृषि के लिए बने बजट में शिफ्ट कर दिया जाएगा।

यही बात वित्तमंत्री ने खाद्य सुरक्षा के मामले में भी किया है। सप्रंग सरकार द्वारा लागू सबको भोजन के अधिकार को अक्षरसः लागू करने के देरी का बहाना बना गरीबों में भी अधिक गरीब तक अनाज की आपूर्ति सुनिश्चित करने की अतिरिक्त व्यवस्था इस बजट में कर दी। कुल मिलाकर इस बजट में आकड़ों की बाजीगरी करने के बजाय आशा और उत्साह का माहौल तैयार करने की कोशिश वित्त मंत्री ने की है अब देखना है कि हकीकत से सामना होने के बाद इस बजट का क्या परिणाम निकलता है।❑

घटता पशुधन का प्रभाव अर्थव्यवस्था पर

वर्तमान में भारत की कुल पशुधन संपदा 50 करोड़ के आस–पास तक पहुंच चुकी होगी। हालांकि, भारत सहित पूरी दुनिया में पशुओं की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं, ऐसे में यह समझना बेहद जरूरी है कि किन पशुओं को पशुधन के अंतर्गत रखा गया है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो हर वह पशु अथवा पशु समूह जिसे श्रम, मांस–भोजन, रेशे अथवा अन्य उत्पादनों के उद्देश्य से पाला जाता है, पशुधन की श्रेणी में आता है।

■ शिवानन्द द्विवेदी

पशु सम्पदा की दृष्टि से भारत का पूरे विश्व में प्रथम स्थान है। आंकड़ों के अनुसार पूरी दुनिया के कुल पशुओं की 19 फीसद संख्या भारत में ही पाई जाती है। गणना के ग्राफ पर अगर भारत में कुल पशुधन की संख्या का जायजा लें तो पशु गणना की अंतिम रपट यही कहती है कि देश के 28 राज्यों तथा 7 केन्द्र शासित प्रदेशों में 48.5 करोड़ की संख्या में पशुधन है। हालांकि, आजादी के बाद वर्ष 1951 में हुई प्रथम पशुगणना में यह संख्या 27 करोड़ 30 लाख के आसपास बताई गयी थी जो वर्ष 2003 में की गयी अब तक की अंतिम पशुगणना में व्यापक वृद्धि के साथ 48.5 करोड़ तक पहुँच चुकी। इस लिहाज से अनुमान लगाया जा सकता है कि वर्तमान में भारत की कुल पशुधन संपदा 50 करोड़ के आस–पास तक पहुंच चुकी होगी। हालांकि, भारत सहित पूरी दुनिया में पशुओं की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं, ऐसे में यह समझना बेहद जरूरी है कि किन पशुओं को पशुधन के अंतर्गत रखा गया है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो हर वह पशु अथवा पशु समूह जिसे श्रम, मांस–भोजन, रेशे अथवा अन्य उत्पादनों के उद्देश्य से पाला जाता है, पशुधन की श्रेणी में आता है। लेकिन इस मामले में मछली पालन एवं मुर्गी पालन अपवाद हैं, क्योंकि विशेष हालात को छोड़कर इन्हें पशुधन के अंतर्गत नहीं रखा गया है।

पशुधन के मामले में दुनिया का अव्वल देश होने के नाते भारत की अर्थव्यवस्था में पशुधन के व्यापक प्रभावों एवं इसके हस्तक्षेप को नकारा नहीं जा सकता। भारत कृषि प्रधान देश है और यहां की लगभग पचास से पैसठ प्रतिशत आबादी कृषि निहित रोजागारों पर निर्भर है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था की कृषि के प्रति निर्भरता को देखते हुए कृषि क्षेत्र में पशुधन के योगदान व भूमिका को भी समझना जरूरी होगा।

कृषि क्षेत्र में पशुधन की भूमिका एवं इसके योगदान से संबंधित आंकड़े बताते हैं कि देश में कृषि उत्पादन में पशुपालन का योगदान 30 प्रतिशत है। एक अनुमान के अनुसार कृषि में पशुश्रम का कुल मूल्य 300 से 500 करोड़ रुपए के आस–पास है। पशुओं से जहां खाद प्राप्त होती है वहीं दूसरी तरफ उनके सींग, खुर व रेशे आदि का कई तरह से उपयोग किया जाता रहा है।

एक संस्था द्वारा जारी आंकड़ों में बताया गया है कि भारत में प्रति मिनट 260 पशु काटे जा रहे हैं। आंकड़ों के अनुसार 1957 में देश में 267 कत्लखाने थे जो आज 3603 हो गये हैं। कत्लखानो में हुई यह वृद्धि पशु संरक्षण की दृष्टि से बेहद निराशाजनक है। पशुओं के अवैध कटान पर अगर जल्द अंकुश नहीं लगाया गया तो भविष्य में चिंतनीय दिख रहा है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में लगभग डेढ़ करोड़ बैलगाड़ियां ग्रामीण यातायात में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन सबके अलावा भारत में पशुधन का बड़ा उपयोग दुग्ध उत्पादन के लिए किया जाता रहा है। भारत की कुल पशु संपदा का बड़ा हिस्सा क्योंकि दुधारू नस्लों के पशुओं का है अतः दुग्ध उत्पादन के नजरिये से भी भारत का विश्व में अग्रणी होना आपेक्षित है। लेकिन दुग्ध उत्पादन के मामले में आंकड़े बिल्कुल उलट हैं और भारत की स्थिति वैसी नहीं है, जैसी होनी चाहिए। विश्व के अवव्ल दर्जे का पशुधन संपन्न देश होने के बावजूद हमारे पास या तो अच्छी नस्ल के दुधारू पशु नहीं हैं या होने के बावजूद हम दुग्ध उत्पादन में बढोत्तरी कर पाने में नाकामयाब ही साबित हो रहे हैं।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक सालाना प्रति गाय से करीब 1108 किलो और प्रति भैंस से 1531 किलो दूध का उत्पादन होता है जबकि नियंत्रण स्तर पर यह आंकड़ा प्रति गाय करीब 2287 किलो दूध के उत्पादन का है। अमेरिका जैसे विकसित देशों में तो इस नस्ल की गाय प्रति वर्ष करीब 6000 लीटर दूध देती है। पशुधन

संरक्षण के मामले में भारत के समक्ष दूसरी सबसे बड़ी चुनौती पशुओं के अवैध कटान की है। नियामकों को ताक पर रख कर चल रहे बूचड़खानो में हो रहा पशु वध, निश्चित तौर पर भारतीय पशु संपदा के लिए खतरनाक है।

पशुधन संरक्षण की दिशा में भारत की स्थिति इसी बात से चिंताजनक प्रतीत होती है कि भारत मांस का बड़ा निर्यातक देश बनता जा रहा है। भारत से अरब देशों व पाकिस्तान को बडी मात्रा में मांस निर्यात हो रहा है। आंकड़े गवाह हैं कि 2007–08 में 3550 करोड़ रुपये, एवं 2008–09 में 4840 करोड़ रुपये का मांस निर्यात 2009–10 में बढ़कर 5481 करोड़ का हो गया था। एक संस्था द्वारा जारी आंकड़ो में बताया गया है कि भारत में प्रति मिनट 260 पशु काटे जा रहे हैं। आंकड़ों के अनुसार 1957 में देश में 267 कत्लखाने थे जो आज 3603 हो गये हैं। कत्लखानो में हुई यह वृद्धि पशु संरक्षण की दृष्टि से बेहद निराशाजनक है। पशुओं के अवैध कटान पर अगर जल्द अंकुश नहीं लगाया गया तो भविष्य में चिंतनीय दिख रहा है। अवैध कटान के चलते पशुओं की अच्छी नस्ल भी लुप्त होती जा रही हैं। हालांकि भारत में पशुधन के आर्थिक व रोजगारपरक महत्व को देखते हुए पिछले कुछ सालों में केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा व्यापक स्तर पर बजटीय प्रावधान रखा गया एवं तमाम योजनाओं के माध्यम से पशुधन विकास को बल देने की दिशा में प्रयास भी किये गए हैं।

पशुपालन एवं दुग्ध विकास आदि क्योंकि राज्य सूची के विषय हैं अतः इस मामले में पहली और बड़ी जवाबदेही राज्य सरकारों की बनती है। लेकिन इसका कतई यह मतलब नहीं है कि इस विषय पर केंद्र बिल्कुल मौन रहे। दरअसल भारत की कुल राष्ट्रीय आय का दस प्रतिशत हिस्सा पशुधन से आता है अतः प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही पशुधन विकास के लिए बजटीय प्रावधान रखा गया था। पशुधन के राष्ट्रीय महत्व को ध्यान में रखते हुए पशुधन के विकास के लिए प्रथम

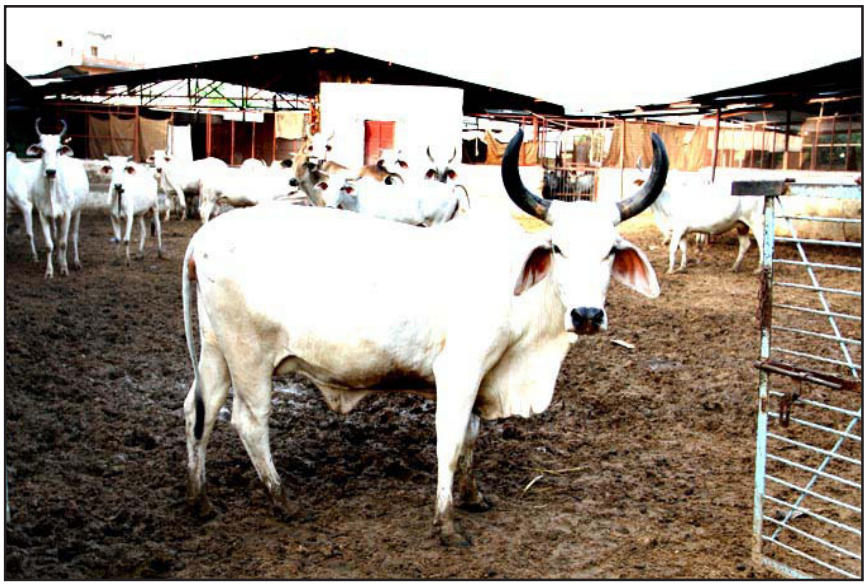

पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत आठ करोड़ रुपये की राशि रखी गई थी। समय के साथ इस राशि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। वर्तमान संदर्भ में अगर देखें तो वर्ष 2010–11 में पशुधन एवं दुग्ध विकास के लिए केन्द्र की तरफ से 1104 करोड़ रुपये और वर्ष 2011–12 में 1243 करोड़ रुपये खर्चे गए हैं।

हालांकि ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना में पशुधन विकास दर का लक्ष्य छह से आठ फीसद रखा गया था लेकिन तय लक्ष्यों तक नहीं पंहुचा जा सका और पशुधन विकास दर 4.8 फीसद ही हासिल हो सकी। लिहाजा बारहवीं पंचवर्षीय योजना में ऐसे प्रयास किये जा रहे हैं कि पशुधन विकास दर के पूर्व लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। इस दिशा में सरकारों द्वारा पशुधन विकास के लिए उपयोगी साबित होने वाली कई नीतियों पर काम किये जाने का प्रावधान है। बारहवी पंचवर्षीय योजना के तहक पशुधन की बात करें तो पशु रोगों पर नियंत्रण, आहार और चारे की कमी, नस्ल सुधार के लिए संसाधनो की कमी व एवं प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था बड़ी चुनौतियां हैं। फिलहाल बिना किसी व्यापरिक गुणवत्ता के 2010–11 में पशुधन से कुल निर्यात 25 हजार 408 करोड़ रुपये का हुआ था, तो अगर पशुधन को व्यापारिक महत्व दिया जाय तो इसमें और अधिक उत्थान की संभावना है। कृषि प्रधान भारत के लिए पशुधन का व्यापार न सिर्फ राष्ट्रीय स्तर की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बना सकता है बल्कि लघु उद्योगों के तौर पर भी एक नई पहल साबित हो सकता है। ❑

कृषि प्रधान भारत के लिए पशुधन का व्यापार न सिर्फ राष्ट्रीय स्तर की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बना सकता है बल्कि लघु उद्योगों के तौर पर भी एक नई पहल साबित हो सकता है।

सूखे से मुकाबले का तरीका

क्या यह सही नहीं है कि 2008–09 में वैश्विक आर्थिक मंदी के समय में भारतीय उद्योगों को 3 लाख करोड़ रुपये का प्रोत्साहन पैकेज दिया गया, जो तीन वर्षों तक चला। यदि उद्योगों को यह पैकेज दिया जा सकता है तो गरीब किसानों को भी यह मदद मिलनी चाहिए। आखिर सवाल देश के 70 फीसद लोगों के जीवन को बचाने का है, क्योंकि उनकी बेहतरी आने वाले वर्षों में आर्थिक विकास का निर्धारण करेगी।

■ देविन्दर शर्मा

सूर्य की किरणें शायद ही किसी पर रहम करती हैं। आजकल दिन में प्रचण्ड गरमी और तपती भूमि के चलते लोगों का घर से बाहर निकलना भी मुहाल है। मानसून में देरी की भविष्यवाणी के साथ

ही उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में बारिश 15 फीसद कम रहने की आशंका है। मानसून की मार की चपेट में उत्तार प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और जम्मू–कश्मीर भी आ गए हैं। इन राज्यों में आने वाले दिनों में अधिक गरमी पड़ने की संभावना है। जून माह में देश के कई स्थानों में 35 सालों का रिकॉर्ड तोड़ते हुए तापमान 47 डिग्री तक पहुंच गया।

मोदी सरकार के समक्ष यह एक बड़ी तात्कालिक चुनौती है, लेकिन मेरी चिंता यही है कि खराब मानसून को केवल विकास में गिरावट की दृष्टि से देखने की बजाय अधिक व्यापक रूप में देखने की आवश्यकता है। कई अर्थशास्त्री और आर्थिक विश्लेषक टीवी चैनलों पर बार–बार यही कह रहे हैं कि कृषि उत्पादन में गिरावट के चलते हम आर्थिक विकास को गति देने में विफल रहे हैं। आशय यही है कि अभी भी हमारा सकल आर्थिक विकास कृषि पर निर्भर है, हालांकि रिजर्व बैंक अपनी ब्याज दरों को घटा नहीं रहा है।

भारतीय मौसम विभाग ने हालिया भविष्यवाणी में मानसून संबंधी अपने अनुमान में सुधार करते हुए इसके और भी कमजोर रहने की बात कही है। अप्रैल माह में घोषित पहली भविष्यवाणी में 95 प्रतिशत मानसून का अनुमान व्यक्त किया था, जो बाद में घटाकर 93 प्रतिशत कर दिया गया। यह सामान्य से कम मानसून के स्तर को व्यक्त करता है। पूर्वोत्तर में 99 प्रतिशत मानसून रहने की बात कही गई जो चिंता का विषय नहीं है। किंतु दक्षिण भारत में 93 फीसद और उत्तर–पश्चिम क्षेत्र में 85 फीसद मानसून रहने की भविष्यवाणी ने होश उड़ा दिए हैं। इस क्रम में अल–नीनो, जो प्रशांत महासागर की एक गर्म धारा है, के प्रभाव स्वरूप सूखा पड़ने की आशंका है।

मौसम संबंधी एक निजी कंपनी स्काइनेट ने 25 प्रतिशत सूखे की संभावना जताते हुए कहा है कि पिछले 135 वर्षों में भारतीय मौसम विभाग सूखे की भविष्यवाणी कर पाने में अक्षम रहा है। इस क्रम में मुझे देश के करोड़ों छोटे और सीमांत किसानों की बदहाली की चिंता सता रही है। वे पहले से ही कर्ज में डूबे हुए हैं। ऐसी स्थिति में खराब मानसून के चलते इनकी घरेलू अर्थव्यवस्था कई वर्षों के लिए पिछड़ जाएगी।

मोदी सरकार के समक्ष यह एक बड़ी

तात्कालिक चुनौती है, लेकिन मेरी चिंता यही है कि खराब मानसून को केवल विकास में गिरावट की दृष्टि से देखने की बजाय अधिक व्यापक रूप में देखने की आवश्यकता है। कई अर्थशास्त्री और आर्थिक विश्लेषक टीवी चैनलों पर बार–बार यही कह रहे हैं कि कृषि उत्पादन में गिरावट के चलते हम आर्थिक विकास को गति देने में विफल रहे हैं। आशय यही है कि अभी भी हमारा सकल आर्थिक विकास कृषि पर निर्भर है, हालांकि रिजर्व बैंक अपनी ब्याज दरों को घटा नहीं रहा है।

दूसरे शब्दों में अर्थशास्त्रियों का विलाप यही है कि खराब मानसून का बिजनेस पर नकारात्मक असर पड़ेगा। यह एक भ्रामक तर्क है। जीडीपी विकास की चिंता के बजाय इस समय नई सरकार का ध्यान इस बात पर होना चाहिए कि किस तरह छोटे और सीमांत किसानों को होने वाले नुकसान को कम किया जाए। पूरी सरकारी मशीनरी को सूखे से निपटने में लगाना चाहिए, ताकि खड़ी फसलों को बचाया जा सके और आपात समय के लिए खाद्यान्न का पर्याप्त भंडारण हो। इसके लिए तत्काल ही कैबिनेट सचिवालय में एक वार रूम का गठन किया जाना चाहिए, जो हर दिन सूखे की स्थिति की निगरानी करे।

मुझे याद है 1987 में भयावह सूखा पड़ा था। करीब 1470 लाख हेक्टेयर कृषि भूमि प्रभावित हुई थी, लेकिन यही वर्ष था जब देश में 200 लाख टन अतिरिक्त खाद्यान्न का भंडारण भी किया गया। बहुत ध्यानपूर्वक खाद्यान्न प्रबंधन योजना बनाई गई और सुनिश्चित किया गया कि सूखा प्रभावित क्षेत्रों में इनकी उपलब्धता बनी रहे। डीजल, बिजली, नहर का पानी आदि भी मिलते रहें। संभवतः आजादी के बाद ऐसा पहली बार हुआ जब भयानक सूखा भुखमरी और भूख का कारण नहीं बना। 1987 से लेकर 2014 तक बहुत कुछ बदल चुका है, लेकिन सूखा अभी भी किसानों और सरकार के लिए एक दुरूस्वप्न है।

इस वर्ष भारत के पास पहले से ही 620 लाख टन खाद्यान्न का आधिक्य है, जो खाद्यान्न आपूर्ति को सामान्य बनाए रखने के साथ–साथ खाद्यान्न महंगाई को नियंत्रित रखने में भी कारगर है। सूखा प्रभावित राज्यों में डीजल के भंडारण से सिंचाई के लिए भूमिगत जल का उपयोग बढ़ेगा। इसी तरह चारे की उपलब्धता भी जरूरी है। सूखे जैसी किसी भी परिस्थिति में सबसे पहले पशु ही प्रभावित होते हैं, लेकिन इस पर सबसे कम ध्यान दिया जाता है। इस क्रम में यह भी सुनिश्चित किया जाना जरूरी है कि किसानों को पर्याप्त बिजली की आपूर्ति मिलती रहे ताकि ट्यूबवेल सही तरह से काम कर सकें। यह बहुत ही अच्छा होगा यदि कृषि मंत्रालय राष्ट्रव्यापी अभियान छेड़कर किसानों को प्रेरित करे कि वे तात्कालिक तौर पर धान की बुआई पर ध्यान केंद्रित करें और मुख्यतया उन खरीफ की फसलों पर ध्यान दें, जिनमें कम पानी की आवश्यकता होती है।

जीडीपी विकास की चिंता के बजाय इस समय नई सरकार का ध्यान इस बात पर होना चाहिए कि किस तरह छोटे और सीमांत किसानों को होने वाले नुकसान को कम किया जाए। पूरी सरकारी मशीनरी को सूखे से निपटने में लगाना चाहिए, ताकि खड़ी फसलों को बचाया जा सके और आपात समय के लिए खाद्यान्न का पर्याप्त भंडारण हो।

कृषि विश्वविद्यालय समेत समूचे कृषि तंत्र, जिसमें निजी कृषि व्यवसायी कंपनियों के साथ राज्य कृषि विभाग भी शामिल हैं, को चाहिए कि वह एसआरआई प्रणाली वाली उत्कृष्ट चावल की खेती को प्रोत्साहित करे। इसमें 30 से 40 फीसद पानी की बचत होती है। कृषि में सर्वाधिक लोगों को रोजगार मिला हुआ है और करीब 70 फीसद आबादी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से इससे जुड़ी हुई है। कम कृषि विकास का अर्थ है जीवनस्तर में गिरावट, जो किसानों की आत्महत्या और ग्रामीण–शहरी स्थानांतरण से जुघ हुआ है।

मजबूत और आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद कृषि वह नींव है जिस पर समूची अर्थव्यवस्था खड़ी होती है। ग्रामवासियों की क्रय क्षमता बढ़ने से वे अधिक उपभोक्ता सामानों की खरीदारी करते हैं, जिससे आर्थिक विकास का पहिया आगे बढ़ता है। इसलिए यह जरूरी है कि कृषि क्षेत्र को कम से कम एक लाख करोड़ रुपये का आर्थिक प्रोत्साहन पैकेज दिया जाए। क्या यह सही नहीं है कि 2008–09 में वैश्विक आर्थिक मंदी के समय में भारतीय उद्योगों को 3 लाख करोड़ रुपये का प्रोत्साहन पैकेज दिया गया, जो तीन वर्षों तक चला। यदि उद्योगों को यह पैकेज दिया जा सकता है तो गरीब किसानों को भी यह मदद मिलनी चाहिए। आखिर सवाल देश के 70 फीसद लोगों के जीवन को बचाने का है, क्योंकि उनकी बेहतरी आने वाले वर्षों में आर्थिक विकास का निर्धारण करेगी। ❑

नई सरकार के लिए आर्थिक मॉडल

मेरा मकसद अपने को विश्व अर्थव्यवस्था से अलग करने का नहीं है। हां सर्वव्यापी जुड़ाव के स्थान पर हमें उतना ही जुड़ाव करना होगा जितना हमारे लिये लाभदायक हो। जैसे फास्ड फूड रेस्तरां में जाकर सलाद खाया जाये और पीजा छोड़ दिया जाये। इसी प्रकार ग्लोबलाइजेशन के अलग–अलग अंगों के लाभ हानि का आकलन करके निर्णय लेना होगा कि उन्हें अपनाया जाये या छोड़ा जाये। जैसे हाईटेक उत्पादों के आयात को आसान बना देना चाहिये। लेकिन कपड़े के आयात को प्रतिबंधित करना श्रेयस्कर हो सकता है।

■ डॉ. भरत झुनझुनवाला

वित्त मंत्री अरुण जैटली शीघ्र ही अपना बजट पेश करने को हैं। बजट में आगामी वर्श की टैक्स की दरों की घोषणा की जाती है। हमारी अर्थव्यवस्था के विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ाव पर इन दरों का गहरा प्रभाव पड़ता है। मसलन आयात कर न्यून होने से विदेशी माल का आयात बढ़ता है। हमारे उद्योग दबाव में आते हैं। हमारा विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ाव गहरा होता है। इसके विपरीत आयात कर बढ़ाने से आयात कम होते हैं और घरेलू उद्योगों को खुला मैदान मिलता है। ध्यान रहे कि अर्थव्यवस्था का अंतिम लक्ष्य जनता है। उद्योगों की जरूरत इसलिये है कि इनमें लोगों को रोजगार मिलता है और खपत के लिये माल का उत्पादन होता है। अतः देखना चाहिये कि विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ाव का आम आदमी पर क्या प्रभाव पड़ता है।

विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा विकासशील देशों पर लगातार दबाव बनाया जा रहा है कि वे विश्व अर्थव्यवस्था से गहराई से जुड़ें। इन संस्थाओं के आका विकसित देश हैं। इनके दबाव में न आकर वित्त मंत्री को जानना चाहिये कि विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ाव का आज तक परिणाम गरीब के लिये सुखद नहीं रहा है।

अधिकतर अर्थशास्त्रियों का मानना है कि हमें विश्व अर्थव्यवस्था से और अधिक गहराई से जुड़ना होगा। अपनी कम्पनियों को दूसरे देशों में प्रवेश करने को प्रोत्साहन देना होगा। प्रत्यक्ष विदे ाी निवे ा को खुदरा रिटेल जैसे चुनिन्दा क्षेत्रों में छोड़कर भोश सभी क्षेत्रों में आकर्शित करना होगा। आपका मानना है कि विदे ाी निवे ा से दे ा में उत्पादन और रोजगार बढ़ेगा जैसे आयात कर घटाने से हमारे नागरिकों को उच्च क्वालिटी का सस्ता माल मिलेगा। निर्यात बढ़ने से उन्हें रोजगार मिलेगा। इस मॉडल को वि व बैंक तथा अंर्तराश्ट्रीय मुद्राकोश के साये में तमाम दे ाों के द्वारा लागू किया जा रहा है। लेकिन परिणाम सुखद नहीं है।

संयुक्त राश्ट्र की संस्था इंटरने ानल लेबर आर्गनाइजे ान ने अभी हाल में प्रकाि ात रपट में वस्तुस्थिति का बयान इस प्रकार किया हैः ''श्रमिकों की बढ़ती संख्या की तुलना में रोजगार नहीं बढ़ रहे हैं। वैि वक रोजगारी की स्थिति आने वाले समय में बिगड़ेगी। वैि वक युवा बेरोजगारी दर 13.1 प्रति ात के एतिहासिक उच्चतम स्तर पर पहुंच गयी है।'' इस संस्था के अनुसार भारत जैसे दक्षिण एि ाया के दे ाों में बेरोजगारी की स्थिति इससे ज्यादा कठिन है। यहां मुख्यतया असंगठित रोजगार बढ़ रहे हैं। अपने दे ा में लोग येन केन प्रकारेण जीविका चला लेते हैं। जैसे किसी की नौकरी छूट जाये तो वह रिक्ा चलाकर या हाट में सब्जी बेचकर अपना पोशण कर लेता है। वास्तव में वह

बेरोजगार है लेकिन आंकड़ों में सरोजगार गिना जाता है। रपट में कहा गया है कि दक्षिण ए ि ाया के कुछ दे ाों में 90 प्रति ात लोग इस प्रकार के असंगठित रोजगार से जीविकोपार्जन कर रहे हैं।

बेरोजगारी की यह बिगड़ती स्थिति इस विकास माडल का तार्किक परिणाम है। इस माडल में उत्पादन आटोमेटिक म ाीनों के द्वारा किया जाता है। उत्पादन के लिये मुट्ठीभर उच्च तकनीकों को जानने वाले श्रमिकों की जरूरत पड़ती है। इन्हें भारी वेतन दिये जाते हैं जैसे 1–2 लाख रुपये प्रति माह देना सामान्य बात हो गयी है। इन चुनिन्दा व्हाइट कालर कर्मचारियों द्वारा एक के स्थान पर तीन घरेलू नौकर रखे जाते हैं। इस प्रकार संगठित रोजगार संकुचित हो रहा है जबकि असंगठित रोजगार बढ़ रहा है। भारत सरकार द्वारा प्रका ि ात आंकड़ों के अनुसार 2000 से 2011 के बीच संगठित क्षेत्र में 11 लाख रोजगार दे ा में उत्पन्न हुये हैं। मेरा अनुमान है कि इस अवधि में 9 करोड़ लोगों ने श्रम बाजार में प्रवे ा किया होगा। यानि श्रम बाजार में प्रवे ा करने वाले 100 में से केवल एक को संगठित क्षेत्र में रोजगार मिल सका है। भोश रिक्ा चला कर अपना पोशण कर रहे हैं। कहा जाता है कि विदे ाी निवे ा के आने से एवं वि व बाजार के बढ़ने से रोजगार उत्पन्न होंगे। कुछ होते भी हैं। परन्तु यह उंट के मुंह में जीरा के समान है। वास्तव में हमारे दे ा में नये रोजगार नहीं उत्पन्न हो रहे हैं।

कहना आसान है कि विदे ाी निवे ा को आकर्शित करने के साथ–साथ छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जायेगा। यह उसी प्रकार है जैसे पहलवान को आमंत्रण देने के साथ–साथ गांव के कुपोशण ग्रसित बालक को प्रोत्साहन देना। दोनों को एक की दंगल में उतरना पड़ेगा। पहलवान को आमंत्रित करेंगे तो बालक बाहर हो ही जायेगा। विदे ाी निवे ाक और घरेलू छोटे उद्योगों को एक ही बाजार में प्रतिस्पर्धा करनी होती है। सत्य है कि गत दो द ाक में छोटे उद्योगों का दायरा सिकुड़ा है।

वि व अर्थव्यवस्था से जुड़ने के लाभ भी हैं। भारत तमाम सेवाओं को उपलब्ध कराने का वै ि वक केन्द्र बनता जा रहा है जैसे डिजाइन, काल सेन्टर, ट्रान्सले ान, रिसर्च, क्लिनिकल ट्रायल इत्यादि में। निर्यात् उद्योगों में रोजगार उत्पन्न होते हैं। परन्तु अन्तिम सत्य यह है कि श्रम बाजार में प्रवे ा करने वाले 100 दे ावासियों में से 1 को ही संगठित क्षेत्र में रोजगार मिला है। मेरी समझ से वि व अर्थव्यवस्था के दायरे में इस समस्या का हल उपलब्ध नहीं है। अपना अनुभव बतलाता है कि आर्थिक सुधारों के पहले संगठित क्षेत्रों में रोजगार ज्यादा उत्पन्न हो रहे थे। सुधारों के बाद वे कम हुये हैं।

मेरा मकसद अपने को वि व अर्थव्यवस्था से अलग करने का नहीं है। हां सर्वव्यापी जुड़ाव के स्थान पर हमें उतना ही जुड़ाव करना होगा जितना हमारे लिये लाभदायक हो। जैसे फास्ड फूड रेस्तरां में जाकर सलाद खाया जाये और पीजा छोड़ दिया जाये। इसी प्रकार ग्लोबलाइजे ान के अलग–अलग अंगों के लाभ हानि का आकलन करके निर्णय लेना होगा कि उन्हें अपनाया जाये या छोड़ा जाये। जैसे हाईटेक उत्पादों के आयात को आसान बना देना चाहिये। लेकिन कपड़े के आयात को प्रतिबंधित करना श्रेयस्कर हो सकता है। भले ही विदे ाी कपड़ा एक रुपये मीटर सस्ता क्यों न हो इससे दे ा के लाखों लोगों का रोजगार प्रभावित होता है अतएव इसे प्रतिबंधित करना ही दे ा के लिये हितकर होगा। तुलना में यदि विदे ाी कम्प्यूटर आधे दाम पर मिल रहा है और इसके आयात से 10–20 हजार श्रमिक ही प्रभावित हो रहे हैं तो इसे आने देना चाहिये। इसी प्रकार हर माल की अलग–अलग गणित करनी चाहिये और जितना लाभप्रद हो उतना अपनाना चाहिये।

यही बात विदे ाी निवे ा पर भी लागू होती है। विदे ाी निवे ा के हर प्रस्ताव का श्रम तथा तकनीकि आडिट कराना चाहिये। इस आडिट में परोक्ष रूप से रोजगार के हनन का आकलन भी करना चाहिये। जैसे खुदरा बिक्री से सीधे एक लाख रोजगार उत्पन्न हुये। परन्तु किराना दुकानों के बन्द होने से परोक्ष रूप से 10 लाख रोजगार का हनन हुआ। इन दोनों प्रभावों का समग्र रूप से आकलन करना चाहिये। इस प्रकार के आकलन को करने के बाद प्रस्तावों को स्वीकार करेंगे तो हम वि व अर्थव्यवस्था से भी जुड़ेंगे और अपने नागरिकों को उच्च कोटि के रोजगार भी उपलब्ध करा सकेंगे। नई सरकार को पिछली यूपीए एवं एनडीए सरकारों की भेड़चाल से हटकर रास्ता बनाना होगा। जरूरत हो तो डबलूटीओ संधि से भी बाहर आने का साहस रखना चाहिए।

वि व बैंक और अंतर्राश्ट्रीय मुद्रा कोश द्वारा विकास ाील दे ाों पर लगातार दबाव बनाया जा रहा है कि वे वि व अर्थव्यवस्था से गहराई से जुड़ें। इन संस्थाओं के आका विकसित दे ा हैं। इनके दबाव में न आकर वित्त मंत्री को जानना चाहिये कि वि व अर्थव्यवस्था से जुड़ाव का आज तक परिणाम गरीब के लिये सुखद नहीं रहा है। ❑

मजदूर हितों की न हो अनदेखी

वर्ष 2014 में संसद की स्थायी समिति ने निर्माण मजदूर कानून संशोधन पर अपनी रिपोर्ट में कहा कि कानून बनने के बाद के पहले 15 वर्षों में इस क्षेत्र में बहुत कम कार्य हुआ। समिति ने कहा कि सरकार के पास तो निर्माण मजदूरों की संख्या के सही आंकड़ें तक नहीं हैं। इन सब समस्याओं व बाधाओं को ध्यान में रखते हुए निर्माण मजदूरों के बहुपक्षीय हितों के लिए सावधानी से नियोजन करना आवश्यक है ताकि निर्माण उपयोग की प्रगति के साथ 4.5 करोड़ निर्माण मजदूरों का जीवन भी बेहतर होता रहे।

■ भारत डोगरा

हाल के वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में निर्माण उद्योग का महत्व तेजी से बढ़ा है। निर्माण उद्योग ने 2006–07 और 2010–11 के बीच लगभग 8.4 की आय वृद्धि दर बनाए रखा। इस दौरान इस उद्योग से प्राप्त सकल घरेलू उत्पाद में 2.85 लाख रुपए से 3.85 लाख रुपए की वृद्धि हुई। निर्माण उद्योग में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश वृद्धि में भी वृद्धि होती रही है। 2007–08 में जहां यह 6989 करोड़ रुपए था वहीं 2009–10 में 13469 करोड़ रुपए तक बढ़ा। परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि निर्माण उद्योग के सामने समस्याएं नहीं हैं। इसमें कई तरह की समस्याएं व्याप्त हैं। सबसे प्रमुख तो यही कि इसकी तेज प्रगति के पीछे जिन निर्माण मजदूरों की अथक मेहनत व खून–पसीने की सबसे बड़ी भूमिका है, उस लिहाज से उनके हितों की किसी भी रूप में रक्षा नहीं हो पाती है। निर्माण मजदूरों की आवास स्थितियों की ओर ध्यान दिलाते हुए राष्ट्रीय श्रम आयोग ने लिखा है कि जो मजदूर चमक–दमक वाले आधुनिक भवन बना रहे हैं, वे स्वयं सबसे बुरी स्थितियों में रहने को मजबूर हैं। निर्माण स्थल पर ठेकेदार इनके लिए जो अस्थाई निवास बनाते हैं उनमें शौचालय, स्नानघर, पीने योग्य पानी जैसी न्यनूतम सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं होतीं। निर्माण कार्य के लिए जो जल उपलब्ध होता है, अक्सर उसी को इन्हें पेयजल के रूप में उपलब्ध कराया जाता है। कार्यस्थल पर बच्चों को कई तरह की स्वास्थ्य समस्याओं और खतरों को झेलना पड़ता है।

राष्ट्रीय श्रम आयोग के अनुसार निर्माण मजदूरों के कार्य करने के हालात प्रायः कठिन और खतरनाक होते हैं। उन्हें खुले आसमान के तले कार्य करते हुए सर्दी–गर्मी का प्रकोप झेलना पड़ता है। बीमार व घायल मजदूरों को ठेकेदार पर्याप्त मुआवजा दिए बिना ही हटा देते हैं व अपने रिकॉर्ड से उनका नाम निकाल देते हैं। कार्य स्थल पर प्राथमिक उपचार की व्यवस्था भी प्रायः अपर्याप्त होती है। निर्माण प्रबंधन व अनुसंधान संस्थान के दिल्ली में किए गए एक अध्ययन के अनुसार मजदूरों की सुरक्षा के मानदंड निर्धारित तो किए गए हैं पर हकीकत में निर्माण स्थलों पर कोई चेतावनी के दिशा–निर्देश नजर नहीं आते हैं। खतरनाक स्थलों की फैंसिंग तक नहीं की गई होती है। कई तरह के कार्य में पूरा परिवार या गैंग सप्ताह के सभी दिन 12 घंटे तक कार्यरत दिखता है।

राष्ट्रीय श्रम आयोग ने लिखा है कि निर्माण मजदूरों की कुछ कार्य में ऐसी हालत है कि इनकी बंधुवा मजदूरों जैसी स्थिति है। खदानों, ईट भठ्ठों व बड़े निर्माण स्थलों पर बंधुआ व्यवस्था सी प्रचलित है जो बाल मजदूरों के जरिए पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलती रहती है। इस उद्योग में महिला मजदूरों का प्रतिशत लगभग चालीस है लेकिन प्रायः उन्हें

कानूनी तौर पर तय न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिलती है।

राष्ट्रीय श्रम आयोग के अनुसार, निर्माण कार्य में सबसे ज्यादा शोषण महिलाओं का ही होता है। समय–समय पर कार्य बदलने से आई अस्थिरता के कारण उन्हें व उनके बच्चों को स्वास्थ्य, पानी, सफाई, शिक्षा व राशन कार्ड की सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है। निर्माण मजदूरों– विशेषकर महिला मजदूरों की असुरक्षा तब बहुत बढ़ जाती है, जब उन्हें बहुत दूर के वीरान इलाकों में परियोजनाओं पर कार्य करने के लिए जाना पड़ता है। यहां वे बुरी तरह अकेले पड़ जाते हैं व बहुत अन्याय होने पर भी समझ नहीं आता कि शिकायत करें तो कहां करें!

हाल के वर्षों में निर्माण उद्योग में मशीनीकरण व आधुनिकीकरण की जो प्रक्रिया चल रही है, उसमें कुशल मजदूरों की हिस्सेदारी बढ़ रही है। यानी अकुशल मजदूर के सामने रोजी का संकट बढ़ रहा है। इसका महिलाओं के रोजगार पर भी प्रतिकूल असर पड़ रहा है। भवन निर्माण स्थल पर मजदूरों की संख्या कम हो सकती है क्योंकि निर्माण कार्य का कुछ हिस्सा अब अन्यत्र तैयार होता है। इस प्रवृत्ति की ओर ध्यान दिलाते हुए दूसरे श्रम आयोग की रिपोर्ट ने श्रम सघन तकनीक के संरक्षण पर जोर दिया है क्योंकि इनमें पूंजी कम लगती है व रोजगार का सृजन अधिक होता है। कुछ आरंभिक अध्ययनों ने निर्माण मजदूरों को मूलतः उन अतिरिक्त मजदूरों के रूप में देखा जो कृषि कार्य कम होने के समय शहरों में आ जाते हैं या जिन्हें ठेकेदार आपदाग्रस्त क्षेत्रों से बड़ी संख्या में ले आते हैं। किन्तु अब यह स्पष्ट हो रहा है कि बड़ी संख्या में निर्माण मजदूर शहरी क्षेत्रों में स्थाई तौर पर रहते हैं और वे अपने घर–गांव पारिवारिक आयोजनों में ही आते–जाते रहते हैं। श्रम– आयोग की रिपोर्ट के अनुसार निर्माण उद्योग में मजदूरी की दर बहुत कम है।

दिल्ली जैसे क्षेत्र में जहां बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य चलता रहता है, वहां भी मजदूरी रोजाना की जरूरतों को पूरा करने के लिए काफी नहीं है। कई स्थानों पर कार्य पूरा होने पर भी पूरी मजदूरी का भुगतान नहीं होता है। एक कुशल मजदूर कई बार छोटा या 'पैटी' ठेकेदार बनने का प्रयास तो करता है पर यदि उसका समय पर भुगतान न हो तो उसके लिए बहुत जल्दी संकट की स्थिति भी पैदा हो जाती है। कई बार निर्माण मजदूरों को जो बिचौलिए निर्माण स्थल तक ले जाते हैं, उनका कमीशन भी मजदूरी से कट जाता है। मजदूरों को कई बार इन बिचौलियों ने पहले से कर्ज दिया होता है। वे इसकी वसूली मजदूरी से करते रहते हैं व मजदूर उनके चंगुल में फंस कर रह जाता है।

देखा जाए आज मजदूरी प्रायः कार्य के ठेके के आधार पर तय होती है। कार्य निर्धारित समय पर पूरा न होने पर मजदूर को पूरी मजदूरी नहीं मिलती है या उसे अतिरिक्त समय देना होता है। इन परिस्थितियों में निर्माण मजदूरों की राष्ट्रीय अभियान समिति द्वारा उनके हितों को सुरक्षित करने संबंधी कानून बनाने व उचित क्रियान्वन के लिए निरंतरता से अभियान चलाने के प्रयास बहुत महत्वपूर्ण हैं।

वर्षों के प्रयास के बाद 1996 में दो अधिनियम बनें – भवन व निर्माण मजदूर (रोजगार व सेवा स्थितियों का नियमन) अधिनियम 1996 व भवन व अन्य निर्माण मजदूर कल्याण उपकर अधिनियम, 1996। इनके बनने के बाद भी इन अधिनियमों की कमियों की ओर ध्यान दिलाना जारी रखा गया है। उच्चतम न्यायालय ने जनवरी 2010 के निर्णय में 1996 से 2010 तक की कानून की समीक्षा करते हुए कहा कि मजदूर वेलफेयर के जो बोर्ड बनाए जाने थे, कुछ राज्यों ने 14 वर्षों में भी नहीं बनाए, जबकि जिन राज्यों ने यह बनाए हैं, उनमें से अधिसंख्य ने उन्हें समुचित स्टाफ व जरूरी सुविधाएं नहीं दी हैं। अतः मजदूरों की भलाई के जरूरी कार्य नहीं हो सके या बहुत कम हो सके। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि उपकर लगाकर जो धनराशि मजदूर कल्याण के लिए बोर्ड को मिलती है, उसका उचित लाभ अभी मजदूरों को नहीं मिल सका है। इसके अन्तर्गत निर्माण मजदूरों का जो रजिस्ट्रेशन जरूरी है, वह भी ठीक से नहीं हो रहा है। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा, कुल मिलाकर अधिनियम के प्रावधानों का क्रियान्वयन संतोषजनक होने से बहुत दूर है। इस अधिनियम के लाभ असंगठित क्षेत्र के निर्माण मजदूरों तक सही ढंग से पहुंचाये जाने बहुत जरूरी हैं। वर्ष 2014 में संसद की स्थायी समिति ने निर्माण मजदूर कानून संशोधन पर अपनी रिपोर्ट में कहा कि कानून बनने के बाद के पहले 15 वर्षों में इस क्षेत्र में बहुत कम कार्य हुआ। समिति ने कहा कि सरकार ने औपचारिकता पूरी की है पर मजदूरों के वास्तविक कल्याण की चिंता उसने कम की है।

समिति ने कहा कि सरकार के पास तो निर्माण मजदूरों की संख्या के सही आंकड़ें तक नहीं हैं। इन सब समस्याओं व बाधाओं को ध्यान में रखते हुए निर्माण मजदूरों के बहुपक्षीय हितों के लिए सावधानी से नियोजन करना आवश्यक है ताकि निर्माण उपयोग की प्रगति के साथ 4.5 करोड़ निर्माण मजदूरों का जीवन भी बेहतर होता रहे। ❑

समस्या

भीख माँगने में खोता बचपन

बच्चों के शारीरिक, मानसिक व सामाजिक विकास के लिए 22 अगस्त 1974 को बनी 'राष्ट्रीय बाल नीति' हो या 1986 की राष्ट्रीय शिक्षानीति या फिर 2010 तक सभी के लिए शिक्षा का विश्व बैंक कार्यक्रम या केंद्र सरकार का सभी को शिक्षा का नारा। फिलहाल सभी कागजी शेर की तरह दहाड़ते दिख रहे हैं। सभी बच्चों को शिक्षा के अधिकार के ढिंढोरे से ज्यादा उस मानवीय दृष्टिकोण जरूरत है जो मासूमों के दिल के अरमानों को पूरा कर सके।

■ पंकज चतुर्वेदी

दिल्ली की ठसाठस भरी बसों में बेसुरे स्वर में गाना गाकर भीख मांगते बच्चों को सुन अब शायद ही किसी के दिल में कसक उठती हो। चीथड़ों में लिपटे और नंगे पैर चार से आठ–दस साल की उम्र के ये बच्चे भोर होते ही बसों में गाने लगते हैं। गाना पूरा करने के बाद दुत्कार के साथ कुछ एक से पैसा मिल जाने की खुशी भले ही इन्हें होती हो, लेकिन यह खुशी इस देश के लिए कितनी महंगी पड़ेगी, इस पर गौर करने का कष्ट कोई भी शासकीय या स्वयंसेवी संगठन नहीं कर रहा है।

आज देश की कुल आबादी का 21.87 प्रतिशत यह वर्ग आने वाले दिनों में किस भारत का निर्माण करेगा, इस पर हर तरफ चुप्पी है। ट्रेन–बस में भौड़ी आवाज में गाना गाने के अलावा, इन मासूमों का इस्तेमाल और भी तरीकों से होता है। कुछ बच्चे (विशेषकर लड़कियां) भीड़ में पर्चा बांटती दिखेंगी कि वह गूंगी है, उसकी मदद करनी चाहिए। छोटे बच्चों को बीच सड़क पर लिटाकर बीमार होने या मर जाने का नाटक कर पैसे ऐंठने का खेल अब छोटे–छोटे कस्बों तक फैल गया है। मथुरा, काशी सरीखे धार्मिक स्थानों पर बाल ब्रह्मचारियों के फेर में भिक्षावृत्ति जोरों पर है। इसके अलावा जादू या सांपने वले का खेल दिखाने वाले मदारी के जमूरे, सेकेंड क्लास डिब्बों में झाड़ू लगा व क्रासिंग पर कार–स्कूटर की धूल झाड़ने जैसे कार्यों के जरिए या सीधे भीख मांगते बच्चे सरेआम मिल जाएंगे।

अनुमान है कि देश में कोई पचास लाख बच्चे हाथ फैलाए एक अकर्मण्य व श्रमहीन भारत की नींव रख रहे हैं। सत्तर के दशक में देश के विभिन्न हिस्सों में कुछ ऐसे गिरोहों का पर्दाफाश हुआ था, जो अच्छे–भले बच्चों का अपहरण कर उन्हें लोमहर्षक तरीके से विकलांग बना भीख मंगवाते थे। यह दानव बच्चों की खरीद–फरोख्त भी करते थे लेकिन नब्बे का दशक आते–आते इस समस्या का रंग–ढंग बदल गया है। ऐसे गिरोहों के अलावा महानगरों में 'झुग्गी संस्कृति' से अनाचार–कदाचार के जो रक्तबीज प्रसवित हुए, उनमें अब अपने सगे ही बच्चों को भिक्षावृत्ति में धकेल रहे हैं। हारमोनियम लेकर बसों में भीख मांगने वाले एक बच्चे से बात करने पर पता चला कि उसके मां–बाप उसे सुबह छह बजे जगा देते हैं। बगैर मंजन–कुल्ला या स्नान के इनको ऐसे बस रूटों की ओर धकेल दिया जाता है, जहां दफ्तर जाने वालों की बहुतायत होती है। भूखे पेट बच्चे दिन में 12 बजे तक एक बस से दूसरी बस में चढ़कर वही अलापते रहते हैं। फिर ये शाम 4.30 बजे से 8.00 बजे तक बसों के चक्कर काटते हैं। रोजाना औसतन 50 से 75 रुपये एक संगीत पार्टी कमा लेती है। ये भिखारी ज्यादातर फुटपाथों पर ही रहते हैं। मां जहां भीख मांगती फिरती है, वहीं बाप नशा करके दिन काट देता है।

जाहिर है नशा खरीदने के लिए पैसे बच्चों की मशक्कत से ही आते हैं। यह भी

दिल्ली की ठसाठस भरी बसों में बेसुरे स्वर में गाना गाकर भीख मांगते बच्चों को सुन अब शायद ही किसी के दिल में कसक उठती हो। चीथड़ों में लिपटे और नंगे पैर चार से आठ–दस साल की उम्र के ये बच्चे भोर होते ही बसों में गाने लगते हैं. . .कुछ एक से पैसा मिल जाने की खुशी भले ही इन्हें होती हो, लेकिन यह खुशी इस देश के लिए कितनी महंगी पड़ेगी, इस पर गौर करने का कष्ट कोई भी शासकीय या स्वयंसेवी संगठन नहीं कर रहा है। देश की कुल आबादी का 21.87 प्रतिशत यह वर्ग आने वाले दिनों में किस भारत का निर्माण करेगा, इस पर हर तरफ चुप्पी है।

देखा गया है कि भीख मांगने वाली लड़कियां 14 वर्ष की होते–होते मां बन जाती हैं और दुबली पतली देह पर एक मरगिल्ला सा बच्चा आय का अच्छा 'एक्सपोजर' बन जाता है। आंख खुलने ही हिकारत, तिरस्कार और श्रम के अवमूल्यन की भावना के शिकार ये बच्चे किस हद तक कुंठित होते हैं, इसका मार्मिक उदाहरण दिल्ली के एक मध्यम वर्ग कालोनी के बगीचे में बच्चों के बीच हो रही तकरार का यह वाकिया है। कुछ भिखारी बच्चे (उम्र सात से नौ वर्ष,) कालोनी के झूले पर झूलने लगे। कालोनी के उतनी उम्र के बच्चे झूला खाली कराना चाहते थे। भिखारी लड़की गुस्से में कहती है,'भगवान करे तुम्हारा भी बाप मर जाए। जब किसी का बाप मरता है तो मुझे बड़ी खुशी होती हैं।' कालोनी के बच्चे ने कहा 'तुझसे क्या मुंह लगें, तू तो फुटपाथ पर सोती है।' 'एक दिन फुटपाथ पर सोकर देख ले, पता चल जाएगा।' मुश्किल से नौ साल की इस भिखारी लड़की के दिल में समाज और असमानता को लेकर भरा जहर किस हद तक पहुंच गया है, यह इस वार्तालाप से उजागर होता है।

यह विष भारत के भविष्य पर क्या असर डालेगा, यह सवाल अभी कहीं खड़ा ही नहीं हो पा रहा है, हल की बात कौन करे! भिक्षावृति निरोधक अधिनियम के अंर्तगत, भीख मांगने वाले को एक से तीन साल के कारावास का प्रावधान है लेकिन कई राज्यों में सपेरे, मदारी, नट, साधु आदि को पुरातन भारतीय लोक–कलाओं व संस्कृति का रक्षक माना जाता है और वे इस अधिनियम की परिधि से बाहर होते हैं। अलबत्ता भिखारी बच्चों को पकड़ने की जहमत कोई सरकारी महकमा उठाता नहीं हैं। फिर यदि इस

सामाजिक समस्या को कानूनी डंडे से ठीक करने की सोचें तो असफलता ही हाथ लगेगी। देश के बाल सुधार गृहों की हालत अपराधी निर्माणशाला से अधिक नहीं है। यहां बच्चों को पीट–पीट कर मार डाला जाता है। भूख से बेहाल बच्चे यौन शोषण का शिकार होते हैं। बाल भिक्षावृत्ति समस्या की चर्चा बालश्रम के बगैर अधूरी लगेगी।

देश में बचपन–बचाने के नाम पर संचालित दुकानों द्वारा बालश्रम की रोकथाम के नारे केवल उन उद्योगों के इर्द–गिर्द भटकते दिखते हैं, जिनके उत्पाद देश को विदेशी मुद्रा अर्जित कराते हैं। भूख से बेहाल बच्चे की पेट व बौद्धिक

देश के बाल सुधार गृहों की हालत अपराधी निर्माणशाला से अधिक नहीं है। यहां बच्चों को पीट–पीट कर मार डाला जाता है। भूख से बेहाल बच्चे यौन शोषण का शिकार होते हैं। बाल भिक्षावृत्ति समस्या की चर्चा बालश्रम के बगैर अधूरी लगेगी।

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए न तो कानून या शासन सक्षम है, न ही समाज जागरूक। ऐसे में बच्चा यदि छुटपन से कोई ऐसा तकनीकी कार्य सीखने लगता है, जो आगे चल कर न सिर्फ उसके जीवकोपार्जन का साधन बनता है, बल्कि देश की आर्थिक व्यवस्था की सुदृढ़ता में भी सहायक होता है, तो यह सुखद है। एक्सपोर्ट कारखानों से बच्चों की मुक्ति की मुहिम चलाने वालों द्वारा सड़कों पर हाथ फैलाए नौनिहालों की अनदेखी करना, उनका बच्चों के प्रति प्रेम व निष्ठा के विद्रूप चेहरे को उघाड़ता है।

बच्चों के शारीरिक, मानसिक व सामाजिक विकास के लिए 22 अगस्त 1974 को बनी 'राष्ट्रीय बाल नीति' हो या 1986 की राष्ट्रीय शिक्षानीति या फिर 2010 तक सभी के लिए शिक्षा का विश्व बैंक कार्यक्रम या केद्र सरकार का सभी को शिक्षा का नारा। फिलहाल सभी कागजी शेर की तरह दहाड़ते दिख रहे हैं। सभी बच्चों को शिक्षा के अधिकार के ढिंढोरे से ज्यादा उस मानवीय दृष्टिकोण जरूरत है जो मासूमों के दिल के अरमानों को पूरा कर सके। ❑

केवल घर नहीं उन्हें समाज चाहिए वहां

कश्मीरी आवाम को यह जानना आवश्यक है कि अगर अधिकतर विस्थापित भी घाटी में बसने जाएं तो भी वहां की आबादी के साम्प्रदायिक अनुपात में एक दो प्रतिशत से अधिक का अंतर नहीं आएगा। दरअसल कश्मीर में आर्थिक विकास और रोजगार के स्रोत खोलने के लिए कश्मीरी विस्थापितों का योगदान किसी बाहरी सहायता से अधिक कारगर हो सकता है।

■ जवाहरलाल कौल

कश्मीरी विस्थपितों के पुनर्वास के लिए क्या गृहमंत्री राजनाथ सिंह की नई घोषणा स्थायी पुनर्वास के दरवाजे खोलेगी जबकि पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की ऐसी ही घोषणा का असर एकदम नकारात्मक रहा था। पूर्व प्रधानमंत्री की योजना के दो ही तत्व थे। पहला यह कि इसमें विस्थापितों को उनके नष्ट हुए घरों के लिए एक धनराशि तय कर दी गई ताकि वे उनकी मरम्मत करके या उनके बदले नए घर बना कर घाटी में रह सकें।

दूसरा तत्व था पुनर्वास के लिए आवश्यक रोजगार की कुछ व्यवस्था भी की गई थी। तीन हजार नौकरियां विस्थापित युवकों के लिए आरक्षित कर दी गई थीं। जहां तक रिहायश का प्रश्न था, यह स्पष्ट नहीं था कि वे विस्थापित कहां रहेंगे जिन्होंने घाटी से भागते हुए अपने घर औने–पौने दामों में बेच दिए थे और अब उनके पास कहने को अपना घर है ही नहीं। जिन मोहल्लों में वे रहते थे, उनका नक्शा ही बदल गया है। पुराने घर टूट कर नए बन गये हैं, गलियां बदल गई हैंए खाली प्लॉट गायब हो गए हैं। ऐसे मोहल्लों में विस्थापित कहां रहने जाते। यह भी साफ नहीं था कि अगर विस्थापित पुराने मोहल्लों के बदले कहीं और जमीन खरीद कर एक समूह में रहना चाहें तो क्या वे ऐसा कर सकते थे। और क्या वे अनुदान के हकदार हैं, जिन नौकरियों के आरक्षण की घोषणा की गई थी उनमें आधी भी उपलब्ध नहीं थी। और कोई नहीं जानता था कि कभी उपलब्ध होंगी भी कि नहीं। ऐसे में घर बनाने के लिए शायद ही किसी विस्थापित ने अर्जी दी हो। नौकरियों के लिए कुछ युवक अवश्य चले गए लेकिन उन्हें भी अस्थायी शिविरों में रहने को मिला जहां वे भय के माहौल में ही रहते रहे हैं। कुल मिलाकर मनमोहन सिंह की योजना एकदम असफल रही क्योंकि वह नितांत अव्यावहारिक थी।

मौजूदा गृहमंत्री राजनाथ सिंह की योजना में तीन तत्व हैं। एक रहने के लिए घर की व्यवस्था और उसके लिए पहले से दुगुनी सहायता राशि यानी अधिकम बीस लाख रपए। दूसरा रोजगार की व्यवस्था और तीसरा विस्थापित लोगों की सुरक्षा और सामुदायिक जीवन के लिए परिस्थितियां बनाना। इसी तीसरे तत्व का अभाव मनमोहन सिंह की योजना को अग्राह्य बनाता था। सुरक्षा और सामुदायिक जीवन के बिना पुनर्वास को किसी भी मायने में व्यावहारिक नहीं कहा जा सकता है। कश्मीरी विस्थापितों को जब नब्बे के दशक में अपने घरों से भागना पड़ा था, उस समय उनके सामने पहली प्राथमिकता सर पर छप्पर और जीने के लिए खाने की थी। अतः उन्हें जहां कहीं भी शरण मिली, वहीं चले गए। आज पचीस साल बाद उनकी दूसरी पीढ़ी जवान हो चुकी है और वे स्वयं बूढ़े। जो तब बच्चे थे, उनके अपने परिवार बन गए हैं और उनके बच्चे विभिन्न संस्थानों में शिक्षा पा रहे हैं। विस्थापित युवकों ने अपनी सामाजिक परंपरा का निर्वाह करते हुए किसी तरह शिक्षा का दामन पकड़े रखा। इसमें किसी–किसी राज्य सरकार ने कॉलेजो में दाखिले दिलाकर या छात्रवृत्ति देकर मदद की। उनमें बहुत से आज रोजगार पा चुके हैं। कहीं सरकारी कार्यालयों में तो कही निजी उद्योगों में।

कहने का अर्थ है कि आज इन विस्थापितों की प्राथमिकता रहने के लिए किसी प्रकार का घर नहीं है। पच्चीस सालों में किसी न किसी तरह के घर उनमें से अधिसंख्य लोगों ने बना ही लिए हैं। अतः वे विपरीत हालात में घाटी में किसी भी स्थान पर एक घर या फ्लैट पाने के लिए ही घाटी से बाहर बसी बसाई हुई घर गृहस्थी को छोड़कर नहीं जाना चाहेंगे। वे विस्थापित होकर बिखर गए थे, अपने सांस्कृतिक मूल्यों से कट गए हैं, अपनी परंपराओं को पीछे छोड़ चुके हैं। आज वे अपने सांस्कृतिक अस्तित्व के लिए वापस जाना चाहते हैं।

स्पष्ट है कि यह तभी संभव होगा अगर उनका पुनर्वास सामूहिक तौर से हो और उन्हें एक समूह की तरह रहने की सुविधा मिले सके। अपना मोहल्ला, अपना गांव, अपना नगर यह एहसास हो। वर्तमान नगरों के बीच में ऐसा होना संभव नहीं है क्योंकि किसी आधुनिक और घनी आबादी वाले नगर में इतनी गुंजाइश होती ही नहीं कि दस–बीस हजार लोगों को रहने का स्थान मिल सके। इसके लिए वैकल्पिक व्यवस्था ही करनी होगी। इसके लिए कई सुझाव सरकार के पास गए हैं। कुछ लोंगों का सुझाव है कि वर्तमान नगरों जैसे श्रीनगर, अनंतनाग, बारामुल्ला आदि के पास ही उपनगर बनाए जाएं जो बड़े नगर से दूर भी न हों और उसके बीच भी नहीं। कुछ वर्तमान नगरों को किनारे से ही विस्तार देने की

वकालत करते हैं। एक सुझाव यह भी है कि कश्मीरी हिंदुओं के धार्मिक या तीर्थस्थानों के आसपास भी विस्थापितों को बसाया जा सकता है ताकि वे अपने धार्मिक स्थानों की देखरेख कर सकें।

लेकिन मूल उद्देश्य है कि विस्थापित इन बस्तियों में वहां आर्थिक विकास में हिस्सदारी करें, स्कूल अस्पताल और बड़े शिक्षा केंद्र स्थापित करें और लघु उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए नए रोजगार पैदा करने का प्रयास करें। बसावट कैसी हो और कहां हो, यह अध्ययन और सर्वेक्षण का विषय है। मौजूदा सरकार की योजना के सभी पहलू अब तक सामने नहीं आए है फिर भी यह कहना होगा कि जब तक राज्य सरकार व कश्मीर के राजनीतिक दलों को साथ नहीं लिया जाता, तब तक इस योजना पर अमल बहुत कठिन है। इस योजना की जानकारी पाते ही अलगाववादी गुटों ने घाटी में आंदोलन आरंभ कर दिया है। इसमें प्रमुख भूमिका **अ**ली शाह गिलानी की रही है। उनका कहना है कि विस्थापितों को बसाया जाए लेकिन सामूहिक रूप से नहीं। पूरे घाटी में दस–बीस घरों के गुमनाम गुटों की तरह। इस शर्त पर तो कोई पुनर्वास योजना सफल हो ही नहीं सकती है भले ही उसमें आर्थिक अनुदान की राशियां कितनी भी हों।

आवश्यकता है गिलानी जैसे नेताओं को यह समझाया जाए कि एक समूह में बसाने का मतलब यह नहीं होता कि जो उस क्षेत्र में पहले से रह रहे हों उन्हें उजाड़ा जाए। विस्थापितों की बस्ती साम्प्रदायिक अलगाव के आधार पर नहीं होनी चाहिए और आर्थिक विकास का जो भी काम होगा, वह केवल किसी समुदाय के लिए नहीं, वहां रहने वाले सभी लोगों के लिए होगा चाहे वे पहले से वहां बस रहे हों या बाद में बस गए हों। गिलानी यह कह कर कश्मीरी मुसलमानों को गुमराह करने की कोशिश कर रहे हैं कि विस्थापितों की बस्तियों के कारण कश्मीर में मुस्लिम बहुलता खतरे में पड़ जाएगी।

कश्मीरी आवाम को यह जानना आवश्यक है कि अगर अधिकतर विस्थापित भी घाटी में बसने जाएं तो भी वहां की आबादी के साम्प्रदायिक अनुपात में एक दो प्रतिशत से अधिक का अंतर नहीं आएगा। दरअसल कश्मीर में आर्थिक विकास और रोजगार के स्रोत खोलने के लिए कश्मीरी विस्थापितों का योगदान किसी बाहरी सहायता से अधिक कारगर हो सकता है। ❑

:: सदस्यता संबंधी सूचना ::

मान्यवर,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है :–

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	150 रुपए	1500/– रुपए
अंग्रेजी	150 रुपए	1500/– रुपए

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740 IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram) में जमा करवा सकते हैं और उसकी रसीद और अपना पता आप कार्यालय में अवश्य भेजे।

स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22

मुखौटे से अधिक नहीं चीन का 'पंचशील'

दरअसल, पंचशील जैसी लोकतांत्रिक अवधारणाएं चीन के लिए उस सिंह की तरह हैं, जो गाय का मुखौटा ओढ़कर धूर्तता से दूसरे प्राणियों का शिकार करता हैं। चेकोस्लोवाकिया, तिब्बत और नेपाल को ऐसे ही मुखौटे लगाकर चीन जैसे साम्यवादी देशों ने बरबाद किया है। पाक आतंकियों को भी चीन, भारत के खिलाफ छायायुद्ध के लिए उकसाता है। चीन के साथ दोहरी मुश्किल है। वह बहुध्रुवीय नियंत्रण मंच पर तो अमेरिका से लोहा लेना चाहता है। किंतु एशिया महाद्वीप में एक ध्रुवीय वर्चस्व का पक्षधर है। इसलिए जापान और भारत को जब–तब उकसाने की हरकतें करता रहता है।

■ **प्रमोद भार्गव**

चीन में जिस वक्त पंचशील की साठवीं वर्षगांठ मनाई जा रही थी और भारत के उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी चीन में अतिथि के तौर पर अमंत्रित थे, ठीक उसी समय पंचशील की मूल अवधारणा को ठेंगा दिखाते हुए चीन ने ऐसा नक्शा जारी किया, जिसमें अरुणाचल प्रदेश और कश्मीर के बड़े भाग को अपना हिस्सा बताया। इसी समय उसने पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में रेल लाइन बिछाने की तैयारी शुरू कर दी और लद्दाख की पैन्गोंग झील में चीनी सैनिकों ने भारतीय सीमा में घुसने की कोशिश की। यह अलग बात है कि भारतीय सैनिकों मुस्तैदी के चलते वे पीछे हट गए। इन हरकतों से साफ है कि चीन की नीयत में खोट है। उससे सवधान रहने की जरूरत है।

लेकिन हैरानी की बात है कि इस बीच बीजिंग में उपस्थित रहे उपराष्ट्रपति ने न चीन से कोई जबाव तलाब किया और न केंद्र की भाजपा सरकार ने विरोध दर्ज कराया। पंचशील यानी शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के लिए ऐसे पांच सिद्वांतों पर सहमति जिसमें शामिल देश अमल के लिए वचनबद्ध हैं। पंचशील की शुरुआत पूर्व प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और चीन के तत्कालीन प्रधानमंत्री चाउ एनलाई ने 28 जून 1954 में की थी। बाद में म्यांमार ने भी इन सिद्धातों को स्वीकार लिया था। ये पांच सिद्धांत थे– संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता का परस्पर सम्मान करना, परस्पर आक्रामक न होना, एक दूसरे के आंतरिक मामलों ने हस्तक्षेप न करना और लाभ एवं शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के अवसर बनाए रखना। लेकिन चीन परस्पर लाभ के सिद्धातों को छोड़ सबको नकारता रहा है। लाभ में भी उसकी सीमाएं भारत में अपने उत्पाद बेचकर आर्थिक हित साधना है। आज चीन सबसे ज्यादा उस सिद्धांत को चुनौती दे रहा है,जो भारत की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता से जुड़ा है। इस चुनौती में उसकी आक्रामकता भी झलकती

चीन ने पंचशील देशों की बैठक में यह प्रस्ताव पंचशील के ऊंचे आदर्श और परस्पर सहयोग को मजबूत करने की दृष्टि से रखा है। इसे चीन ने 'एक गलियारा, एक मार्ग' रूपरेखा के तहत प्रस्तुत किया है। लेकिन चीन का अब तक का व्यवहार पंचशील के सिद्धांतों के विपरीत रहा है। वह अपने हित साधने के साथ ही पड़ोसियों पर दादागिरी थोपने की मंशा पाले रहता है। जिससे उसकी कथनी और करनी का अंतर उजागर होता है।

है।

चीन ने अपना जो नया नक्शा जारी किया है, उसमें उसने अरुणाचल, अक्साई चीन और काराकोरम को अपना हिस्सा बताया है। हालांकि चीन अपनी ऑनलाइन मानचित्र सेवा में यही दर्शाता रहा है। विश्व मानचित्र खंड में इसे चीन की मंदारिन भाषा में दर्शाते हुए अरुणाचल को दक्षिणी तिब्बत का भाग बताया है। तिब्बत पर चीन का निरकुंश कब्जा पहले से ही है। इसी करण वह अरुणाचलवासियों को चीनी नागरिक मानता है। गोया चीन अरुणाचल के लोगों को नत्थी वीजा देने का हठ जारी रखे है। नत्थी वीजा देने के कारण व्यक्ति की चीन–यात्रा भारतीय पासपोर्ट पर दर्ज नहीं की जाती। इसके बजाए, सादे कागज के प्रारूप पर जानकारी दर्ज कर, उसे पारपत्र के साथ नत्थी कर दिया जाता है। भारत इस मनमानी पर कई बार ऐतराज जता चुका है, लेकिन चीन को फर्क नहीं पड़ता।

ताजा जानकारी के मुताबिक चीन ने पीओके से होते हुए भारत–पाक सीमा पर रेल लाइन बिछाने का काम शुरू कर दिया है। यह रेल लाइन चीन के सीमावर्ती प्रांत शिजियांग के कशगर से पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह तक जाएगी। इस बंदरगाह के निर्माण का ठेका भी चीन के पास है। यह खाड़ी देशों से आने वाले तेल टैंकरों के मुख्य मार्ग पर स्थित है। यह रेल लाइन पामीर के पठार और कराकोरम पहाड़ियों से होते हुए पाकिस्तान पहुंचेगी। इसकी लंबाई करीब 1800 किलोमीटर है। यह रेल इस्लामाबाद और कराची होकर भी गुजरेगी। इस क्षेत्र में सड़क बनाने के बाद रेल मार्ग विकसित करना चीन की नई ऐसी कूटनीतिक चाल है, जो भारत को पराजय के भाव जैसे शूल की तरह चुभने वाली है।

दरअसल पाकिस्तान ने 1963 में पीओके का 5180 वर्ग किमी क्षेत्र चीन को भेंट कर दिया था। तब से चीन पाक का मददगार है। चीन ने इस क्षेत्र में कुछ दिनों के भीतर ही 80 हजार डॉलर का पूंजी निवेश किया है। यहां से वह अरब सागर पहुंचने की जुगत में है। इस क्षेत्र में चीन से सीधे इस्लामाबाद पहुंचने के लिए कराकोरम सड़क मार्ग भी बना लिया गया है। इसके बाद ही चीन पीओके क्षेत्र को पाक का हिस्सा मानने लगा है।

यही नहीं, चीन ने समुद्र तल से 3750 मीटर की ऊंचाई पर बर्फ से ढंके गैलोंग्ला पर्वत पर 3.3 किमी लंबी सुरंग बना भारत की सीमा तक सड़क बनाने की राह में आ रही आखिरी बाधा भी पार कर ली है। यह सड़क सामरिक नजरिए से बहुत महत्वपूर्ण है। क्योंकि तिब्बत में मोशुओ काउंटी अरुणाचल का अंतिम छोर है। अब तक यहां कोई सड़क मार्ग नहीं था लेकिन अब इसी के समानातंर पीओके होती हुई रेल पटरी बिछाने का सिलसिला भी शुरू हो रहा है। इसे अंतरराष्ट्रीय रेल लिंक परियोजना के तहत शुरू किया जा रहा है। अंतरराष्ट्रीय सड़क और रेल मार्ग विकसित करने के क्रम में चीन प्राचीन समुद्री सिल्क गलियारा भी पुनर्जीवित करना चाहता है। यह मार्ग बांग्लादेश, चीन, भारत व म्यामांर के बीच आर्थिक गलियारे के रूप में तैयार होगा ताकि एशिया समेत विश्व में आयात–निर्यात आसान हो।

चीन ने पंचशील देशों की बैठक में यह प्रस्ताव पंचशील के ऊंचे आदर्श और परस्पर सहयोग को मजबूत करने की दृष्टि से रखा है। इसे चीन ने 'एक गलियारा, एक मार्ग' रूपरेखा के तहत प्रस्तुत किया है। लेकिन चीन का अब तक का व्यवहार पंचशील के सिद्धांतों के विपरीत रहा है। वह अपने हित साधने के साथ ही पड़ोसियों पर दादागिरी थोपने की मंशा पाले रहता है। जिससे उसकी कथनी और करनी का अंतर उजागर होता है। चीन के राष्ट्रपति, पड़ोसी देशों की सहमति से जिस समय समुद्री मार्ग बनाने का प्रस्ताव रख रहे थे, लेह से 168 किमी दूर पूर्वी लद्दाख में पैन्गोंग झील में चीनी सैनिक घुसपैठ को अंजाम दे रहे थे। हालांकि झील में गश्त कर रहीं, भारतीय सैनिको की अत्याधुनिक शस्त्रों से लैस नौकाओं ने चीनियों को वापस जाने को विवश कर दिया लेकिन उसकी मंशा तो जाहिर हो ही जाती है।

दरअसल, पंचशील जैसी लोकतांत्रिक अवधारणाएं चीन के लिए उस सिंह की तरह हैं, जो गाय का मुखौटा ओढ़कर धूर्तता से दूसरे प्राणियों का शिकार करता हैं। चेकोस्लोवाकिया, तिब्बत और नेपाल को ऐसे ही मुखौटे लगाकर चीन जैसे साम्यवादी देशों ने बरबाद किया है। पाक आतंकियों को भी चीन, भारत के खिलाफ छायायुद्ध के लिए उकसाता है। चीन के साथ दोहरी मुश्किल है। वह बहुध्रुवीय नियंत्रण मंच पर तो अमेरिका से लोहा लेना चाहता है। किंतु एशिया महाद्वीप में एक ध्रुवीय वर्चस्व का पक्षधर है। इसलिए जापान और भारत को जब–तब उकसाने की हरकतें करता रहता है। उसकी ताजा हरकतें शायद इसलिए भी सामने आई हों, ताकि नई सरकार के रुझान का अंदाजा लग सके ? लेकिन फिलहाल सरकार की चुप्पी हैरानी में डालने वाली है। ❑

दक्षिणायन हिन्दी

दशकों पूर्व से कोचीन से मलयालम मनोरमा की ओर से 'युग प्रभात' नाम के अत्यंत लोकप्रिय साप्ताहिक हिंदी पत्र और हिंदी विद्यापीठ (केरल) से 'संग्रथन' मासिक पत्रिका और कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति की ओर से 'हिंदी प्रचार वाणी' का प्रकाशन हो रहा है. हिंदी समर्थक पहल को वापिस लेनें के स्थान पर आज अधिक आवश्यक हो गया है कि दक्षिण के जनसामान्य की भावनाओं को न समझनें वालें और अनावश्यक हिंदी विरोध की राजनीति करनें वालों के प्रति कठोर रूख रखा जाए और ऐसे असंतोष उपजा रहे दक्षिणी नेताओं पर कठोरता से अंकुश भी लगाया जाए।

■ **प्रवीण गुगनानी**

भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने जब कहा था कि वे विदेश यात्राओं के दौरान और अन्य राजनयिक अवसरों पर वैश्विक नेताओं से हिंदी में ही करेंगे तो देश में हिंदी को लेकर गौरव भाव और प्रतिष्ठित हो चला था। किन्तु हाल ही में गृह मंत्रालय ने जब द्रविड़ नेताओं के अनावश्यक और लचर दबाव में आते हुए हिंदी को लेकर जारी आदेशों में सुरक्षात्मक भूमिका अपनाई तो हिंदी के शुभचिंतकों को चिंता हो गई है। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान ही समस्त देशभक्तों ने औपनिवेशिक आचरण से मुक्ति पाने हेतु अंग्रेजी से मुक्ति और हिंदी को भारतीय भाषाओं की माँ का स्थान देनें के भाव को भारतीय भाषा विधान का स्थायी भाव मान लिया था और लाख विरोध पर भी इस बात पर अटल भी रहे थे। किन्तु अब हिंदी को लेकर बड़ा ही तदर्थवादी आचरण होने लगा है।

इस क्रम में देखें तो भारतीय गणतंत्र में तमिलनाडु की फिल्मी प्रकार की राजनीति जो देश को विभिन्न मोर्चों पर विचित्रता की सीमा तक जाकर छकाती और सताती रही है वह तमिल जनता के भाव को समझें बिना ही सदा हिंदी विरोध को अपना हथियार बनाएं रहती है। बहुत से राष्ट्रीय विषयों में हम तमिल राजनीति के विभिन्न नौटंकी रूप हम देखते चलें आयें हैं और यहाँ तक कि वैदेशिक मामलों में भी श्रीलंका को लेकर तमिल के स्थानीय वोटों की राजनीति के कारण हम वैश्विक मंचों पर दायें बाएं देखनें को मजबूर होते रहें हैं। तमिल में हिंदी को लेकर दशकों पूर्व से एक प्रकार का पूर्वाग्रह और वितंडा खड़ा किया जाता रहा है। यहाँ हिंदी विरोध के आधार पर कई राजनेताओं ने छद्म स्थानीयवाद खड़ा किया और भोली–भाली तमिल जनता को भाषा के नाम भड़का कर अपनी राजनैतिक रोटियाँ सेंकी हैं। हिंदी को लेकर इस प्रकार के प्रपंची आचरण की दोषी तमिल की दोनों प्रमुख पार्टियां रहीं है। कटु सत्य है कि तमिलनाडु के दोनों प्रमुख दलों ने हिंदी विरोध को मात्र इसलिए अपना हथियार बनाया कि कहीं दूसरा दल भाषावाद के इस हथियार से अपनी लाइन लम्बी न खींच दे!!

आज तमिलनाडु में हिंदी को रोजगार का स्वर्णिम सोपान मानने के कारण ही जगह जगह 'हिंदी स्पीकिंग कोर्स' के बोर्ड दिखते हैं। जनसामान्य में असंतोष है कि निजी विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चे तो हिंदी पढ़कर अपनी रोजगार की संभावनाएं प्रबल कर लेतें हैं किन्तु शासकीय विद्यालयों के विद्यार्थी हिंदी पीछे रह जाते हैं। दक्षिणी राज्यों में हिंदी को आजीविका का साधन विकसित करने का एक प्रबल माध्यम मानने का ही परिणाम है. . .

पिछले दिनों जब प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने गृहमंत्रालय में हिंदी में कामकाज बढ़ाने का आदेश दिया तो मात्र कुछ तमिल नेताओं ने इसका विरोध किया था और अलगाव के बेसुरे गीत गानें के सिद्ध हो चुकें उमर अब्दुल्ला ने भी इस सुर में अपना सुर मिला दिया था। तमिल मुख्यमंत्री जयललिता ने कहा कि सोशल मीडिया पर आधिकारिक संवाद की भाषा हिंदी की बजाय अंग्रेजी ही होनी चाहिए। फिर सदा की तरह भेड़चाल चलते हुए पीएमके के रामदास ने भी गृहमंत्रालय के इस आदेश के विरोध में अपना व्यक्तव्य जारी कर दिया। इसके बाद जो हुआ वह दुखद भी है और नरेन्द्र मोदी की छवि और उन्हें मिलें जनादेश की भावना के विपरीत भी; हुआ यह कि इस पर मचे अनावश्यक और शुद्ध सियासती प्रकार के वितंडे और प्रपंच से केंद्र सरकार अपने आदेश से पीछे हट गई!! तमिलनाडु या दक्षिण के किसी अन्य प्रांत में सामान्य जनता के बीच से किसी भी प्रकार के विरोध के स्वर या प्रतिक्रया उपजे बिना ही केंद्र सरकार ने अपनें आदेश में सुधार करते हुए पुनः कहा कि सिर्फ हिंदी बोलने वाले प्रदेशों में ही सोशल मीडिया पर हिंदी में कामकाज होगा। यद्यपि इस आदेश से भी हिंदी को पर्याप्त आधार और संबल मिलेगा तथापि नरेन्द्र मोदी का इस प्रकार एक मुख्यमंत्री

के दबाव में आ जाना और आदेश से पीछे हट जाना अशुभ और अनपेक्षित ही है!!

दक्षिण भारत के केरल में मलयालम, कर्नाटक में कन्नड, आंध्र में तेलुगु और तमिलनाडु तथा पुदुच्चेरी में तमिल अधिक प्रचलित भाषाएँ हैं। ये चारों द्रविड़ परिवार की भाषाएँ मानी जाती हैं। स्वतंत्रता के पश्चात इन राज्यों में हिंदी बोले सुनें जानें का अभाव ही होता था तब इन राज्यों के नेता हिंदी के विरोध में जन आन्दोलन करने और जनता को भड़काने में सफल हो जाते थे किन्तु वर्तमान में जिस प्रकार दक्षिण में हिंदी को रोजगारमूलक भाषा मानकर इसके प्रति आकर्षण बढ़ रहा है तब हिंदी विरोध को लेकर इन जयललिताओं और करुणानिधियों द्वारा किसी जन आन्दोलन को खड़ा कर पाना असंभव ही है। इन नेताओं को इस तथ्य को समझना चाहिए कि यदि उनके राज्यों की जनता हिंदी सीख कर या मात्र बोलने सुननें भर की क्षमता विकसित करके यदि अपनी व्यावसायिक निपुणता या पेशेवर दक्षता बढ़ा पाती है तो इसमें दोष क्या है? वोटों की खातिर क्षुद्र राजनीति करने वाले इन हिंदी विरोधी नेताओं को समझना चाहिए कि दक्षिण भारत का शेष भारत की संस्कृति और भाषा के प्रति अपना आदरभाव का और विनम्र अनुगामी भाव का अपना गरिमामय और आदरणीय इतिहास रहा है। उत्तर भारत के तीर्थों के प्रति अपने पूज्य भाव के कारण यहाँ का सनातनी और हिन्दू समाज हिंदी भाषा सीखने और माता–पिता के गंगा स्नान करा लेने को सदा उत्सुक रहा है!

हिंदी सीख लेने की रूचि के आधार पर ही 1918 में मद्रास में 'हिंदी प्रचार आंदोलन' को प्रारम्भ हुआ था और इसी वर्ष में स्थापित हिंदी साहित्य सम्मेलन मद्रास कार्यालय आगे चलकर दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में स्थापित हुआ। बाद में तमिल और अन्य दक्षिणी राज्यों की जनता की भावनाओं का आदर करते हुए ही इस संस्था को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित किया गया। वर्तमान में इस संस्थान के चारों दक्षिणी राज्यों में प्रतिष्ठित शोध संस्थान है। और बड़ी संख्या में दक्षिण भारतीय इस संस्थान से हिंदी में दक्षता प्राप्त कर हिंदी की प्राणपण से सेवा कर रहें हैं।

हिंदी के प्रसार और प्रतिष्ठा में संलिप्त हजारों दक्षिण भारतीय बंधु न मात्र हिंदी से अपने रोजगार के अवसरों को स्वर्णिम बना रहे हैं अपितु दक्षिण में हिंदी प्रचार के क्रम में ऐसी कई प्रतिष्ठित संस्थाओं को भी स्थापित करते रहें हैं। इसी क्रम में केरल में 1934 में केरल हिंदी प्रचार सभा, आंध्र में 1935 में हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद और कर्नाटक में 1939 में कर्नाटक हिंदी प्रचार समिति, 1943 में मैसूर हिंदी प्रचार परिषद तथा 1953 में कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति की स्थापना हुई। इन संस्थानों में लाखों छात्र हिंदी की परीक्षाओं में सम्मिलित व उत्तीर्ण होते हैं।

तमिलनाडु में तथाकथित और पूर्वाग्रही विरोध के कारण भले ही शासकीय शिक्षण संस्थानों में हिंदी की उपेक्षा हो रही हो, किन्तु कई निजी संस्थानों में हिंदी की पढ़ाई जारी है, और इनकी परीक्षाओं में छात्रों की संख्या लाखों में रहती है। आज तमिलनाडु में हिंदी को रोजगार का स्वर्णिम सोपान मानने के कारण ही जगह जगह 'हिंदी स्पीकिंग कोर्स' के बोर्ड दिखते हैं। जनसामान्य में असंतोष है कि निजी विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चे तो हिंदी पढ़कर अपनी रोजगार की संभावनाएं प्रबल कर लेतें हैं किन्तु शासकीय विद्यालयों के विद्यार्थी हिंदी पीछे रह जाते हैं। दक्षिणी राज्यों में हिंदी को आजीविका का साधन विकसित करने का एक प्रबल माध्यम मानने का ही परिणाम है कि यहाँ कई सेवाभावी संस्थाएं निःशुल्क हिंदी कक्षाओं का संचालन, लेखन, प्रकाशन, पत्रकारिता, गोष्ठियों का आयोजन निरंतर कराती रहतीं हैं।

मुम्बईया हिंदी फिल्मों और हिंदी गीतों की लोकप्रियता के कारण भी हिंदी अब दक्षिणी राज्यों में एक सहज सामान्य रूप से बोली सुनी जाने लगी है। आज हैदराबाद, बैंगलूर तथा चेन्नई नगरों से दसियों बड़े और कई छोटे हिंदी समाचार पत्र प्रकाशित हो रहें हैं। यहाँ यह कतई न समझा जाए कि दक्षिण भारत में हिंदी का चलन कुछ दशकों की देन है! दक्षिण के सभी राज्यों में हिंदी का अपना दीर्घ और समृद्ध इतिहास रहा है, दो सौ वर्ष पूर्व भी केरल में 'स्वाति तिरुनाल' के नाम से सुविख्यात तिरुवितांकूर राजवंश के राजा राम वर्मा (1813–1846) ने हिंदी की कालजयी कृतियाँ रचीं थी जो वहां के जनजीवन में अब भी परम्परागत रूप से आदर पूर्वक बोली सुनी जाती हैं।

दशकों पूर्व से कोचीन से मलयालम मनोरमा की ओर से 'युग प्रभात' नाम के अत्यंत लोकप्रिय साप्ताहिक हिंदी पत्र और हिंदी विद्यापीठ (केरल) से 'संग्रथन' मासिक पत्रिका और कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति की ओर से 'हिंदी प्रचार वाणी' का प्रकाशन हो रहा है. हिंदी समर्थक पहल को वापिस लेनें के स्थान पर आज अधिक आवश्यक हो गया है कि दक्षिण के जनसामान्य की भावनाओं को न समझनें वालें और अनावश्यक हिंदी विरोध की राजनीति करनें वालों के प्रति कठोर रूख रखा जाए और ऐसे असंतोष उपजा रहे दक्षिणी नेताओं पर कठोरता से अंकुश भी लगाया जाए। ❑

बढ़ते तापमान वृद्धि से बढ़ रही मुश्किलें

भारत में बदलते मौसम की मार अन्य देशों की अपेक्षा ज्यादा है। सरकार को अपनी योजना में इस ओर भी ध्यान देना होगा कि जलवायु बदलाव के इस दौर में उसकी मशीनरी गंभीर आपदाओं व प्रतिकूल मौसम के लिए कहीं अधिक तैयार रहे। सरकार और समाज के स्तर पर लोगों को भी पर्यावरण के मुद्दे पर गंभीर होना होगा, अन्यथा साल दर साल तापमान में वृद्धि का चक्र चलता ही रहेगा।

■ शशांक द्विवेदी

दिल्ली सहित उत्तर भारत के कई प्रमुख शहरों में लोग भीषण गर्मी व लू से परेशान हैं। दिन में झुलसा देने वाली धूप हो रही है जिससे लोगों का घर से बाहर निकलना दूभर हो गया है। जगह– जगह गर्म हवाएं भी चल रही हैं। भीषण गर्मी और बढ़ते तापमान से जनजीवन अस्त–व्यस्त हो गया है। दिल्ली सहित देश के कई स्थानों पर हल्की बारिश हुई है लेकिन उससे कुछ खास राहत नहीं मिली है।

मौसम विभाग के अनुसार इस बार मानसून के देर से आने की संभावना है इसलिए गर्मी से निजात जल्द नहीं मिलने वाली है। इतनी ज्यादा गर्मी 'हीट वेव' के बनने की वजह से है। अधिकतम तापमान सामान्य से पांच डिग्री सेल्सियस अधिक होने पर हीट वेव की स्थिति बनती है। तेज धूप के साथ ही नमी भी काफी कम हो जाती है, ऐसे में सूरज की तपिश और जमीन गर्म होने पर हवा के गर्म थपेड़े परेशानी की वजह बनते हैं।

उत्तर भारत में जमीन से पांच किलोमीटर ऊपर मौजूद एक एंटीसाइक्लोन गर्मी को और गरम बनाने का काम कर रहा है। एंटीसाइक्लोन में हवाएं एंटीक्लॉकवाइज चलती हैं। यानी हवाएं ऊपर से नीचे की ओर आती हैं। इस स्थिति में वायुमंडलीय दाब बढ़ जाता है। वायुमंडलीय दाब बढ़ने के साथ ही तापमान भी बढ़ता है। इस स्थिति में गरम हवाएं और भी गरम हो गई हैं। जहां एक तरफ समूचे मैदानी इलाकों में पछुआ हवाओं ने तापमान ऊपर उठा दिया है, वहीं दूसरी तरफ कमजोर वेस्टर्न डिस्टरबेंस चढ़े हुए पारे को लगातार ऊपर

ही रहने दे रहे हैं। हीट वेव कंडीशन (यानी तीव्र लू) ने गर्मी के प्रकोप को और बढ़ा दिया है। अब हालत यह है कि बढ़े हुए पारे के बीच लू का सामना भी करना पड़ रहा है। भारत में लू लगने से हाइपोथेमिया और हृदय व सांस से संबंधित रोगी बढ़ रहे हैं। देश के अधिकतर शहरों का अधिकतम तापमान 40–47 डिग्री सेल्सियस के बीच है। सुबह से लेकर शाम तक हवा ऐसी चल रही है जैसे आग की लपटें निकल रही हों। अधिकतर जगहों पर दक्षिण–पश्चिम हवाएं चल रही है जिनकी रफ्तार 12 से 20 किलोमीटर प्रति घंटा है। इससे गर्मी का असर और तेज होता जा रहा है।

मौसम विभाग के मुताबिक अगले कुछ हफ्तों में वेस्टर्न डिस्टरबेंस की वजह से एंटी साइक्लोन कमजोर पड़ सकता है जिससे लोगों को थोड़ी राहत मिल सकती है। लेकिन यह राहत मामूली होगी और इन सभी इलाकों में अधिकतम तापमान सामान्य से ऊपर बना रहेगा। पिछले दिनों पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने जलवायु परिवर्तन पर 'इंडियन नेटवर्क फॉर क्लाइमेट चेंज असेसमेंट' की रिपोर्ट जारी करते हुए चेताया है कि यदि पृथ्वी के औसत तापमान का बढ़ना इसी प्रकार जारी रहा तो आगामी वर्षों में भारत को इसके दुष्परिणाम झेलने होंगे। पहाड़, मैदानी, रेगिस्तानी, दलदली क्षेत्र व पश्चिमी घाट

जैसे समृद्ध क्षेत्र ग्लोबल वार्मिंग के कहर का शिकार होंगे।

एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में कृषि, जल, पारिस्थितिकी तंत्र एवं जैव विविधता व स्वास्थ्य ग्लोबल वार्मिंग से उत्पन्न समस्याओं से जूझते रहेंगे। वर्ष 2030 तक औसत सतही तापमान में 1.7 से 2 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो सकती है। इस रिपोर्ट में चार भौगोलिक क्षेत्रों– हिमालय क्षेत्र, उत्तर–पूर्वी क्षेत्र, पश्चिमी घाट व तटीय क्षेत्र के आधार पर पूरे देश पर जलवायु परिवर्तन का अध्ययन किया गया है। इन चारों क्षेत्रों में तापमान में वृद्धि के कारण बारिश और गर्मी–ठंड पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन कर संभावित परिणामों का अनुमान लगाया गया है। यह रिपोर्ट बढ़ते तापमान के कारण समुद्री जलस्तर में वृद्धि एवं तटीय क्षेत्रों में आने वाले चक्रवातों पर भी प्रकाश डालती है। अमेरिका में हुए नए शोध के मुताबिक आर्कटिक क्षेत्र में पिछले दो हजार सालों में तामपान सबसे अधिक हो गया है जो इस बात का संकेत है कि मानवीय गतिविधियों के कारण पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि आर्कटिक में पूरे उत्तरी गोलार्ध की तुलना में तीन गुना तेजी से तापमान बढ़ रहा है और इसकी वजह मानवीय गतिविधियों से पैदा हो रही कार्बनडाई आक्साइड है। यह शोध अमेरिकी पत्रिका जर्नल साइंस में छपा है। शोध के अनुसार पिछले सात हजार वर्षों में एक ऐसी प्राकृतिक स्थिति बननी थी जिसमें आर्कटिक के क्षेत्र को सूरज की कम से कम रोशनी मिलनी चाहिए थी। इस प्रक्रिया के तहत आर्कटिक को अब भी ठंडा होते रहना था। हालांकि ऐसा हुआ नहीं।

वर्ष 1900 के बाद आर्कटिक का तापमान बढ़ता जा रहा है और 1950 के बाद इसमें और अधिक तेजी आ गई है। पिछले 2000 वर्षों में आर्कटिक का तापमान अभी सबसे अधिक है। पिछली एक सदी में आर्कटिक का तापमान पूरे उत्तरी गोलार्ध की तुलना में तीन गुना तेजी से बढ़ा है। शोधकर्ताओं का कहना है कि इसमें अब कोई शक नहीं रह गया है कि तापमान बढ़ने की वजह सिर्फ और सिर्फ मानवीय गतिविधियों के कारण पैदा होने वाली कार्बन डाई आक्साइड है। वैज्ञानिकों ने भूगर्भीय रिकॉर्ड और कंप्यूटरों की मदद से पिछली दो शताब्दियों में तापमानों का खाका तैयार किया है। वैज्ञानिकों ने चेताया है कि अगर आर्कटिक का तापमान बढ़ता ही रहा तो इससे समुद्र के जलस्तर में तेजी से बढ़ोतरी हो सकती है। विशेषज्ञों के अनुसार पारा 40 डिग्री सेल्सियस को पार कर जाना एक गंभीर संकेत है और इसका संबंध ग्लोबल वार्मिंग से है। इस तरह का हीट वेव अब पहले के मुकाबले लंबा खिंच सकता है और इससे सतर्क रहने की जरूरत है।

पिछले दिनों पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने जलवायु परिवर्तन पर 'इंडियन नेटवर्क फॉर क्लाइमेट चेंज असेसमेंट' की रिपोर्ट जारी करते हुए चेताया है कि यदि पृथ्वी के औसत तापमान का बढ़ना इसी प्रकार जारी रहा तो आगामी वर्षों में भारत को इसके दुष्परिणाम झेलने होंगे। पहाड़, मैदानी, रेगिस्तानी, दलदली क्षेत्र व पश्चिमी घाट जैसे समृद्ध क्षेत्र ग्लोबल वार्मिंग के कहर का शिकार होंगे।

जलवायु परिवर्तन के अंतरराष्ट्रीय पैनल के मुताबिक विश्व के औसत तापमान में एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई है। पैनल का मानना है कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में रुकावट नहीं आने के कारण जलवायु में कई परिवर्तन आए हैं जो स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाल रहे हैं। इस बात की आशंका जताई जा रही है कि आने वाले 90 वर्षों में तापमान में 1.8 से 4 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि हो जाएगी।

ग्लोबल वार्मिंग और बेमौसम होने वाली बारिश के कारण बीमारियों में इजाफा हुआ है। साथ ही कुपोषण के मामले भी बढ़े हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण सर्दी और गरमी के मौसम में मरने वालों की संख्या बढ़ी है। पिछले कुछ वर्षों में भारत में बदलते मौसम के दौरान हजारों लोगों ने अपनी जान गंवाई है। भारत में लू लगने से हाइपोथेमिया (हीट वेव) और हृदय और सांस से संबंधित रोगी बढ़ रहे हैं। भारत, बांग्लादेश और मलेशिया में जलवायु परिवर्तन के कारण हर साल डेंगू, मलेरिया, डायरिया, चिकनगुनिया और जापानी इंसेफ्लाइटिस के कारण काफी मौत होती हैं। वहीं वायरल हेपेटाइटिस के मरीजों की संख्या में भी तेजी आई है। बदलते मौसम के कारण बीमारियों के प्रति मनुष्य का शरीर संतुलन नहीं बना पा रहा है, जिससे हर साल मौतों का आंकड़ा बढ़ता जा रहा है।

भारत में बदलते मौसम की मार अन्य देशों की अपेक्षा ज्यादा है। सरकार को अपनी योजना में इस ओर भी ध्यान देना होगा कि जलवायु बदलाव के इस दौर में उसकी मशीनरी गंभीर आपदाओं व प्रतिकूल मौसम के लिए कहीं अधिक तैयार रहे। सरकार और समाज के स्तर पर लोगों को भी पर्यावरण के मुद्दे पर गंभीर होना होगा, अन्यथा साल दर साल तापमान में वृद्धि का चक्र चलता ही रहेगा। ❑

धुएं में उड़ता बच्चों का भविष्य

बच्चों में धूम्रपान की कुप्रवृत्ति अफ्रीका और दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों में सर्वाधिक है। इसका मूल कारण अशिक्षा, गरीबी और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव है। आज बड़ा सवाल यह है कि बच्चों को इस बुरी लत से कैसे दूर रखा जाए और किस तरह उन्हें स्वास्थ्य के प्रति सचेत किया जाए? आज देश के 50 फीसद बच्चे कुपोषण के शिकार हैं और अगर उनमें नशाखोरी की प्रवृत्ति बढ़ती है तो यह उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए घातक होगा।

■ **अरविन्द जयतिलक**

यह चिंताजनक है कि देश के स्कूली बच्चों में धुम्रपान की लत बढ़ती जा रही है। पिछले दिनों भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के एक सर्वेक्षण में खुलासा हुआ है कि कम उम्र में स्कूली बच्चे धूम्रपान की ओर आकर्षित हो रहे हैं, जो उनके स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि 70 प्रतिशत छात्र 15 साल से कम उम्र में ही नशीले उत्पादों मसलन पान मसाला, सिगरेट, बीड़ी और खैनी का सेवन शुरू कर देते हैं। उल्लेखनीय तथ्य यह कि धूम्रपान की जद में केवल सरकारी स्कूलों के बच्चे ही नहीं, उन निजी स्कूलों के बच्चे भी है जहां बेहतर शिक्षा के साथ चरित्र–निर्माण का दावा किया जाता है और मोटी फीस वसूली जाती है।

भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद का यह सर्वेक्षण रेखांकित करता है कि बच्चों को नशाखोरी से दूर रखने और नैतिक रूप से सबल बनाने में स्कूलों की भूमिका कमजोर पड़ रही है। यह बेहद चिंतनीय है। लेकिन समझना होगा कि इस भयावह स्थिति के लिए सिर्फ स्कूल ही जिम्मेदार नहीं हैं। समाज भी बराबर का गुनाहगार है। स्कूलों की परिधि से बाहर का वातावरण कम प्रदूषित नहीं है। सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान का फैलता जहर, फिल्मों के धूम्रपान वाले दृश्य, माता–पिता का धूम्रपान और बुरी संगत बच्चों के बालमन को प्रभावित कर रहे हैं।

पिछले दिनों प्रकाश में आई स्वीडिश नेशनल हेल्थ एंड वेलफेयर बोर्ड की रिसर्च में बच्चों में धुम्रपान की लत की कई वजहें गिनाई गई हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि बच्चे अपने आसपास के लोगों को धूम्रपान

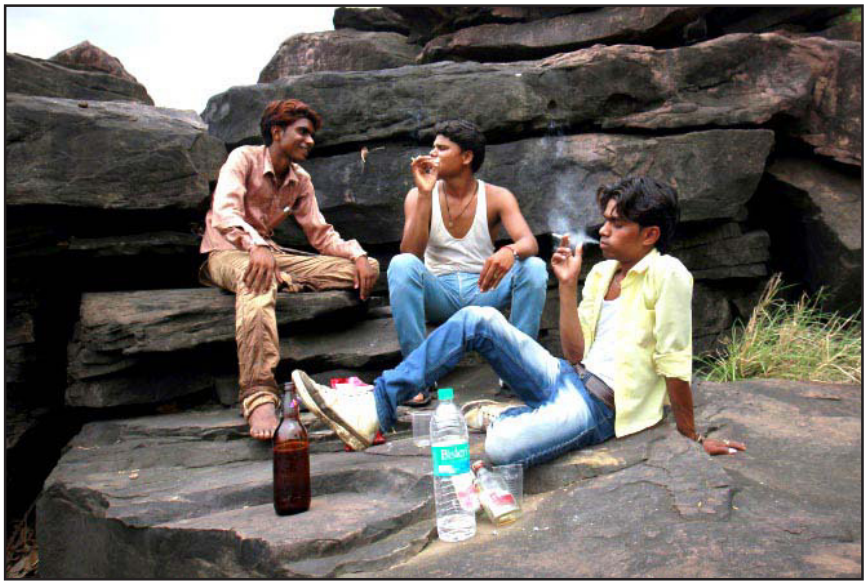

करते देख उसके प्रति आकर्षित होते हैं और उनमें भी धूम्रपान की इच्छा पनपती है। जिन बच्चों के माता–पिता धूम्रपान करते हैं, उनके बच्चे इसके प्रति अपेक्षाकृत जल्दी आकर्षित होते हैं।

ब्रिटिश मेडिकल जर्नल लैंसेट की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि स्मोकिंग न करने वाले 40 फीसद बच्चों और 30 फीसद से अधिक महिलाओं–पुरुषों पर अप्रत्यक्ष धूम्रपान का भी घातक प्रभाव पड़ता है। यानी अप्रत्यक्ष धूम्रपान भी बच्चों में पनपने वाली गंभीर बीमारियों के जिम्मेदार है। इसके कारण बच्चे शीघ्र ही अस्थमा और फेफड़े के कैंसर जैसी गंभीर बीमारियों की चपेट में आ जाते हैं। गत वर्ष पहले वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशन के टोबैको–फ्री इनिशिएटिव के प्रोग्रामर डॉ. एनेट ने धूम्रपान को लेकर गहरी चिंता जताते हुए कहा था कि अगर बच्चों को इस बुरी लत से दूर नहीं रखा गया तो इसके गंभीर परिणाम होंगे।

उल्लेखनीय तथ्य यह है कि बच्चों में धूम्रपान की कुप्रवृत्ति अफ्रीका और दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों में सर्वाधिक है। इसका मूल कारण अशिक्षा, गरीबी और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव है।

आज बड़ा सवाल यह है कि बच्चों को इस बुरी लत से कैसे दूर रखा जाए

और किस तरह उन्हें स्वास्थ्य के प्रति सचेत किया जाए? आज देश के 50 फीसद बच्चे कुपोषण के शिकार हैं और अगर उनमें नशाखोरी की प्रवृत्ति बढ़ती है तो यह उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए घातक होगा। ऐसे में उचित होगा कि सरकार, समाज, स्कूल और स्वयंसेवी संस्थाएं इस बुराई को समाप्त करने के लिए रोडमैप तैयार कर मिल–जुलकर काम करें।

सरकार ने सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान को रोकने के लिए कड़े कानून बनाए हैं। कानून में अर्थदंड का प्रावधान भी है। लेकिन इसके बावजूद भी इस पर रोक लगती दिख नहीं रही है। बस स्टैंड, रेलवे स्टेशन, अस्पतालों एवं अन्य सार्वजनिक स्थलों पर लोगों को धूम्रपान करते देखा जा सकता है।

यह स्थिति इसलिए बनी हुई है कि कानून का समुचित रूप से पालन नहीं हो रहा है। उचित होगा कि धूम्रपान के खिलाफ कड़े कानून का क्रियान्वयन हो। लेकिन यह भी समझना होगा कि सिर्फ कानून बनाकर धूम्रपान पर अंकुश नहीं लगाया जा सकता। इसके लिए सामाजिक जागरुकता ज्यादा जरूरी है। बच्चों को धूम्रपान से दूर रखने के लिए इसके कारण होने वाली खतरनाक बीमारियों से उन्हें परिचित कराना होगा तथा उन्हें यह भी समझाना होगा कि धूम्रपान एक सामाजिक बुराई है। जब तक बच्चों में लोकलाज एवं मर्यादा का खयाल नहीं आएगा तब तक वे इस बुराई का परित्याग नहीं करेंगे। इसके लिए समाज एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे बढ़कर जागरुकता का कार्यक्रम चलाना होगा। इस दिशा में स्कूल महती भूमिका निभा सकते हैं। इसलिए कि स्कूलों में होने वाली सांस्कृतिक गतिविधियां एवं खेलकूद बच्चों के मन पर सकारात्मक असर डालती हैं। इन गतिविधियों के सहारे बच्चों में नैतिक संस्कार विकसित किए जा सकते हैं।

पहले स्कूली पाठ्यक्रमों में नैतिक शिक्षा अनिवार्य होती थी। गुरुजन बच्चों को आदर्श व प्रेरणादायक किस्से– कहानियों के माध्यम से उन्हें सामाजिक–राष्ट्रीय सरोकारों से जोड़ते थे। धूम्रपान के खतरनाक प्रभावों को रेखांकित कर इससे दूर रहने की शिक्षा देते थे। लेकिन विगत कुछ समय से स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रमों से नैतिक शिक्षा गायब है। शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ बच्चे को रोजगार के लिए तैयार करने तक सिमटकर रह गया है। जबकि बच्चों को सभ्य, सुसंस्कृत और संवेदनशील बनाना स्कूलों की शीर्ष प्राथमिकता होनी चाहिए। लेकिन स्थिति उलट है। शिक्षा के मंदिर, जहां बच्चों का चरित्र गढ़ा–बुना जाता है और उनकी उदात्त भावनाओं को पंख लगाया जाता है, वह खुद चरित्र के संकट से जूझ रहे हैं। जिन शिक्षा मंदिरों से ज्ञान की गंगा प्रवाहित होनी चाहिए वहां बच्चों के शारीरिक व मानसिक शोषण की व्यथाएं चीत्कार मार रही हैं। कुछ घटनाएं तो दिल को दहला देने वाली हैं।

पिछले दिनों सुना गया कि मथुरा में एक शिक्षक अपनी शिष्या को डरा–धमका कर कई दिनों तक उसके साथ दुराचार करता रहा। उड़ीसा के भुवनेश्वर में गुरु कहे जाने वाले एक हैवान को दस साल की एक स्कूली बच्ची के साथ ज्यादती करते पकड़ा गया। देश व समाज को शर्मसार करने वाली इस तरह की अनेकों घटनाएं हैं जो स्कूलों की भूमिका पर सवाल खड़ा करती हैं। माहौल कितना दूषित हो गया है यह इसी से समझा जा सकता है कि गत वर्ष दिल्ली के एक बड़े कॉलेज में एक दर्जन से अधिक छात्राएं फ्रेंडशिप के नाम पर खुलेआम शराब पीती पकड़ी गई। पिछले दिनों महिला और बाल विकास मंत्रालय की रिपोर्ट में कहा गया कि हर चौथा स्कूली बच्चा यौन शोषण का शिकार है। तमाम शोधों से यह भी उद्घाटित हुआ है कि शिक्षकों में धूम्रपान की प्रवृत्ति बढ़ रही है। यह चिंताजनक है। जब शिक्षक ही धूम्रपान करेंगे तो बच्चों पर उसका नकारात्मक असर पड़ना तय है।

आज जरूरत इस बात की है कि सरकार सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान के खिलाफ सख्त रुख अख्तियार करे और स्कूल भी नैतिक शिक्षा को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाएं। बच्चे राष्ट्र के निर्माता व समाज की थाती हैं। ऐसे में राज्य व समाज का कर्तव्य बनता है कि वह उनकी शिक्षा के अलावा उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा को लेकर संवेदनशील हो। स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए बच्चों का शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक है। विद्वान थॉमस फूलर कहते हैं कि एक स्वस्थ दिमाग एक सौ हाथों से श्रेष्ठ है। ❑

बच्चों को धूम्रपान से दूर रखने के लिए इसके कारण होने वाली खतरनाक बीमारियों से उन्हें परिचित कराना होगा तथा उन्हें यह भी समझाना होगा कि धूम्रपान एक सामाजिक बुराई है। जब तक बच्चों में लोकलाज एवं मर्यादा का खयाल नहीं आएगा तब तक वे इस बुराई का परित्याग नहीं करेंगे। इसके लिए समाज एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे बढ़कर जागरुकता का कार्यक्रम चलाना होगा।

निर्मल गंगा की नई उम्मीद

सवाल यही है कि क्या हम मोदी के नेतृत्व वाले नई सरकार से किसी चमत्कार की अपेक्षा कर सकते हैं। यह हो सकता है और नहीं भी। यह चमत्कार तभी हो सकता है, जब नदियों की सफाई के विफल हो चुके मॉडल को खत्म किया जाए और नदियों के पुनर्जीवन व उनकी बहाली के उद्देश्य को नए सिरे से शुरू किया जाए।

मोदी कोई पहले प्रधानमंत्री नही हैं जिन्होंने गंगा की खराब हो रही दशा के संबंध में देश का ध्यान आकर्षित किया हो। उन्होंने गंगा के गौरव को फिर से बहाल करने की प्रतिबद्धता जताई। हालांकि मां गंगा की निर्मलता और अविरलता को बहाल करने के लिए मोदी की भाषा और उनकी प्रतिबद्धता सीधे लोगों के दिलों को छूती है। अपनी पसंद के तौर पर भाजपा की फायरब्रांड नेता और झांसी से सांसद उमा भारती को गंगा के पुनर्जीवन के लिए केंद्रीय मंत्रालय का प्रभार देकर उन्होंने अपने इरादे साफ कर दिए। यह राजीव गांधी ही थे, जिन्होंने वर्ष 1985 में भारत में नदियों की सफाई के युग का आरंभ किया और इसके लिए कार्ययोजना के तौर पर गंगा एक्शन प्लान की शुरुआत की। इसका उद्देश्य गंगा और उसकी सहायक नदियों के जल की गुणवत्ता के स्तर में सुधार लाना था ताकि इसे स्नान योग्य बनाया जा सके। बाद में आने सभी सरकारों ने न केवल इस कार्यक्रम को सतत रूप से जारी रखा, बल्कि इसके उद्देश्य और कार्यक्षेत्र का भी विस्तार किया।

दिसंबर 2012 में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट के मुताबिक देश के 20 राज्यों के 190 छोटे शहरों से गुजरने वाली 41 नदियों की सफाई के काम पर तकरीबन 4032 करोड़ रुपये खर्च किए गए। वर्ष 2012 में विज्ञान और

■ मनोज मिश्रा

तकनीक तथा पर्यावरण एवं वन मामलों की विभागीय संसदीय स्थायी समिति ने 2012–13 के लिए अनुदान संबंधी मांग पर अपनी 224वीं रिपोर्ट पेश की है। 18 मई, 2012 को राच्यसभा में पेश करने के दौरान संसदीय समिति ने अफसोस जताते हुए कहा कि कमेटी इस निष्कर्ष पर पहुंची है

उमा भारती ने नदियों की सफाई की शब्दावली को खारिज करते हुए इन्हें पुनर्जीवन देने की बात कही। इससे उम्मीद बंधती है कि नदियों को लेकर वह कितनी गंभीर हैं। कुछ लोग कह सकते हैं कि नाम में क्या रखा है? वास्तव में नदियों के पुनर्जीवन और बहाली शब्द का अपने आप में बहुत महत्व है।

कि छठी पंचवर्षीय योजना के तहत गंगा नदी को साफ–सुथरा बनाने के लिए गंगा एक्शन प्लान को शुरू किया गया। इसके बाद गंगा एक्शन प्लान के द्वितीय चरण समेत कुछ अन्य योजनाओं को अलग–अलग नाम से इस मंत्रालय द्वारा क्रियान्वित किया गया, लेकिन इन सभी प्रयासों के अंतिम नतीजों से आज हर कोई वाकिफ है।

वास्तविकता यही है कि आज गंगा के जल की गुणवत्ता दिनों–दिन खराब होती गई अथवा गिरती गई है। भारत में नदियों की सफाई का काम 1980 के मध्य से अस्तित्व में आया, लेकिन यह हमारी नदियों को जीवित करने अथवा उनकी पुनर्बहाली में पूरी तरह विफल रहा। यह विषय ध्यान दिए जाने योग्य है कि वर्ष 1984–85 में शुरू किए गए गंगा एक्शन प्लान के करीब 30 वर्ष बाद भी हालत यही है कि किसी एक भी नदी की सफाई के काम को सफलतापूर्वक अंजाम नहीं दिया जा सका है। यह हालत तब है जबकि नई दिल्ली स्थित पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के तहत राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय के सीधे देख–रेख में यह काम आरंभ हुआ था। इसलिए सवाल यही है कि क्या हम मोदी के नेतृत्व वाले नई सरकार से किसी चमत्कार की अपेक्षा कर सकते हैं। यह हो सकता है और नहीं भी। यह चमत्कार तभी हो सकता है, जब नदियों की सफाई के विफल हो चुके मॉडल को खत्म किया जाए और नदियों के पुनर्जीवन व उनकी बहाली के उद्देश्य को नए सिरे से शुरू किया जाए।

उमा भारती ने नदियों की सफाई की शब्दावली को खारिज करते हुए इन्हें पुनर्जीवन देने की बात कही। इससे उम्मीद बंधती है कि नदियों को लेकर वह

कितनी गंभीर हैं। कुछ लोग कह सकते हैं कि नाम में क्या रखा है? वास्तव में नदियों के पुनर्जीवन और बहाली शब्द का अपने आप में बहुत महत्व है। मोदी और उमा भारती इस अंतर को शुरुआत में ही समझ लिया है, लेकिन समय ही बताएगा कि वर्तमान अच्छाई और दृढ़–गंभीर इरादे सही दिशा में परिणाम दे सकेंगे या नहीं, और यदि हां तो ये कितने टिकाऊ और मजबूत होंगे। फिलहाल सबसे बड़ी चुनौती यही है कि तेज आर्थिक विकास की नीतियों और प्राकृतिक भारत के संरक्षण, संवर्धन में किस तरह संतुलन स्थापित किया जाता है। प्राकृतिक भारत के संरक्षण में मां गंगा के पुनरोद्धार और राज्यों की दूसरी अन्य नदियों की अविरलता और निर्मलता शामिल है।

नदियों के पुनर्जीवन का सबसे तीव्र रास्ता नदी तंत्र की बहाली है। इसका आशय यही है कि एक नदी और उसकी सहायक नदियों को स्वाभाविक, प्राकृतिक और स्वतंत्र रूप से बहने दिया जाए, जिसमें बाढ़ भी स्वाभाविक है। परंतु इसके लिए आवश्यक है कि नदियों पर बने बांध, बैराज और तटबंधों जैसी बाधाओं को समाप्त किया जाए। ये नदियों के दायरे को सीमित करते हैं। यह एक आदर्श अवस्था है, लेकिन तेज आर्थिक विकास के पक्षधर इसे बाधक मानते हैं। इसलिए यहां कुछ मध्य मार्ग भी हैं। प्रत्येक आर्थिक गतिविधि के लिए जल और ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिससे ठोस और द्रव रूप में प्रदूषण भी होता है। वर्तमान बिजनेस परिदृश्य में जलविद्युत का उपयोग होता है। इसमें पानी की काफी जरूरत होती है जिससे बड़े पैमाने पर नदियां सूख रही हैं। इसी तरह नदियों में हर तरह के प्रदूषण को उड़ेला जा रहा है और यह सबसे आसान तरीका बन गया है। इस संदर्भ में संपन्न, लेकिन व्यापक रूप से बीमार देश की अपेक्षा हमें स्वस्थ और खुशहाल देश के अंतर को अवश्य ही समझना होगा।

बेहतर स्वास्थ्य के लिए शुद्ध वायु के साथ ही हमें स्वस्थ भोजन और पीने योग्य साफ पानी की भी आवश्यकता होती है। यह तभी संभव है जब हमारी वायु शुद्ध हो, जमीन स्वस्थ हो और नदियां निर्मल हों। इससे भी अधिक यह समझना होगा कि नदियां एक प्राकृतिक प्रणाली हैं जो मानव शरीर की तरह शिराओं तथा धमनियों के रूप में धरती के लिए कार्य करती हैं। इस संदर्भ में हमें अपने कार्यव्यवहार को देखने की आवश्यकता है। इसके लिए जहां उद्योगों को प्रदूषण उत्सर्जन से पूरी तरह मुक्त करना होगा, वहीं हमारे शहरों और गांवों को ठोस व द्रव प्रदूषणों का अपने स्तर पर प्रबंधन करना होगा। इस क्रम में ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति सौर व वायु ऊर्जा जैसे नवीकरणीय स्रोतों से करनी होगी।

बेहतर स्वास्थ्य के लिए शुद्ध वायु के साथ ही हमें स्वस्थ भोजन और पीने योग्य साफ पानी की भी आवश्यकता होती है। यह तभी संभव है जब हमारी वायु शुद्ध हो, जमीन स्वस्थ हो और नदियां निर्मल हों। इससे भी अधिक यह समझना होगा कि नदियां एक प्राकृतिक प्रणाली हैं जो मानव शरीर की तरह शिराओं तथा धमनियों के रूप में धरती के लिए कार्य करती हैं। इस संदर्भ में हमें अपने कार्यव्यवहार को देखने की आवश्यकता है।

हमारे किसानों को भी प्राकृतिक एवं जैविक खाद्यान्नों के उत्पादन पर जोर देना चाहिए और विभिन्न जल इकाइयों जिनमें नदियां भी शामिल हैं, को आज के सांस्कृतिक मूल्यों और नियम–कानूनों के माध्यम से संरक्षित करना होगा। सही मायने में गंगा को पुनर्जीवन तभी मिल सकता है जब इसके लिए आवश्यक आवश्यकताओं को समग्रता में पूरा किया जाएगा। इसके लिए 2,500 किलोमीटर लंबी गंगा की सभी सहायक नदियों पर ध्यान देना होगा। इसके लिए न केवल पारिस्थितिकीय प्रवाह और उसकी सुरक्षा को सुनिश्चित करना होगा, बल्कि नदियों के सफाई प्रयासों को महज सरकार तक सीमित रखने के बजाय जन आंदोलन का रूप देना होगा। इस संबंध में यह भी महत्वपूर्ण है कि गंगा की सफाई से भी अधिक महत्वपूर्ण है इसमें पड़ने वाले कचरे और गंदगी पर रोक लगाई जाए। इसके लिए हमें अपने कानून को कड़ा करने के साथ–साथ इन पर कड़ाई से पालन भी करना होगा। इस क्रम में देवालयों में मां गंगा को मगरमच्छ पर बैठे दिखाया गया है।

साफ है कि नदी जैवविविधता को बनाए रखने के लिए मछलियों, कछुओं, मगरमच्छों और डॉल्फिन के साथ–साथ सैकड़ों तरह के पौधों और जानवरों को भी पुर्नस्थापित करना होगा। ऐसा किए बिना मां गंगा को नया पुनर्जीवन मिल पाना संभव नहीं। गंगा को निर्मल, अविरल बनाए रखने के लिए जरूरी है कि शेष बातों पर भी सरकार ध्यान दे। ❑

दृष्टिकोण

आर्थिक विकास के साथ नैतिक, आध्यात्मिक व पर्यावरण विकास जरूरी

आज अमरीका व पूरा पश्चिमी जगत चौराहे पर है। नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों – जिसके लिए सदा भारत जाना जाता रहा है – उस तरफ देखने को मजबूर है पश्चिमी जगत। हमने भी भौतिक विकास किया था बल्कि दुनिया में हम भी सर्वाधिक विकसित थे। 18वीं शताब्दी के प्रारंभ तक भी विश्व जीडीपी में भारत का योगदान 20 प्रतिशत तक रहा है। अंग्रेजों की गलत नीतियों, परतंत्रता के कारण आज भारत बदहाल दिखता है। किन्तु क्योंकि भारत की विकास दृष्टि में भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक, पर्यावरण–प्रेमी सभी आयाम हैं।

■ सतीश कुमार

अमरीका कहते ही जो नक्शा लोगों के दिल और दिमाग में उभरता है वह है एक अतिविकसित, संपन्न खुशहाल देश का। दुनिया की सुपरपावर जो सारी दुनिया का अधोषित मुखिया बना है। जो किसी भी देश की आर्थिक–सामाजिक स्थिति ही नहीं रक्षा/प्रतिरक्षा के विषय में भी हस्तक्षेप करता है। चौड़ी सड़के, तेज रफ्तार वाली रेलें, हवाई जहाजों का बड़ा व्यापक तंत्र, ही नहीं तो सम्पूर्ण दुनिया को 9 बार नष्ट कर सकने वाला हथियारों का जखीरा! शिक्षा–व्यापार में भी दुनिया भर में धाक।

दूसरी तरफ अपना भारत दुनिया की दूसरे नम्बर की आबादी। किंतु दुनिया में विकासशील (प्रयत्नीशील) देश की छवि। जो विकास के प्रमुख सभी मापदण्डों पर खरा उतरता नहीं दिखता। यद्यपि गत 20–22 वर्षों में दुनिया में वह एक शक्ति के नाते से उभरा है। परमाणु विस्फोट से लेकर क्रयशक्ति में दुनिया में तीसरे स्थान पर पहुँचा भारत, फिर भी एक परांपरागत देश माना जाता है।

लेकिन पश्चिमी सभ्यता का सर्वोच्च प्रतीक जो तथाकथित विकास तो बहुत कर गया पर क्या वह स्थिर, सुखी, स्वस्थ व प्रेरणादायी समाज है। पाया/दिखता यह है कि अमरीका एक रुग्ण समाज है, एक खुला विशाल हस्पताल। (देखें तालिका में)

धोखाधड़ी के मामले में वह दुनिया में दूसरे स्थान पर है। यह आँकड़ा भारत से 8 गुणा अधिक है। अत्यंत समृद्ध व पढ़े–लिखे अमरीका में हत्या दर 7 प्रतिशत अधिक है। यह तो तब जब वहां 2 गुणा पुलिस है व कम आबादी किन्तु खुला क्षेत्रफल है।

	अमरीका	भारत
आबादी	32.22 करोड़	125 करोड़
प्रति व्यक्ति आय प्रति वर्ष	51749 डॉलर	1503 डॉलर
धोखाधड़ी केस	3,71,800 (स्थान 2) भारत से 8 गुणा अधिक	41403 (12वाँ स्थान)
हत्याएँ	5.9 प्रति लाख (भारत से 7 प्रतिशत अधिक)	0.55 प्रति 1 लाख
पुलिस	256 प्रति लाख (140 प्रतिशत भारत से अधिक)	130 प्रति लाख
कैदी	2,01,9234 (25 करोड़ में) 715 एक लाख पर	3,32,782 29 व्यक्ति प्रति एक लाख
महिला कैदी	8.5 प्रति एक लाख (183 प्रतिशत भारत से अधिक)	3 प्रति एक लाख
सामाजिक सुरक्षा	22 प्रतिशत जीडीपी का	
बलात्कार	32 प्रति 1 लाख/प्रतिदिन 1872 बलात्कार, एक वर्ष में 683280	1.5 प्रति एक लाख
डकैती	146.4 प्रति एक लाख	1.6 प्रति एक लाख
अनब्याही माताएँ	34 % जिन्होंने कभी शादी नहीं कराई कुल 45% (जिनके पति तलाक/दिवंगत हो गए) 21% लड़कियां 18 साल से पहले माँ बन जाती हैं।	
तलाक दर	कुल 51% शादियाँ प्रथम 5 साल में ही तलाक में बदल जाती हैं।	प्रतिशत में नहीं आता
आत्महत्या	12.2 प्रति लाख (2010 में)	
दिमागी गिरावट	19.2 प्रतिशत (दूसरे नम्बर पर)	9% से कम
हृदय रोग	25 अमरीकी कम अधिक हृदय रोग से पीड़ित	प्रतिशत में नहीं

Source: graphs.net/india-vs-us-crime-statistics-infographics.html

दुनिया में सर्वाधिक कैदी अमरीका में ही है। प्रति एक लाख 715; महिला कैदी भी कम नहीं। एक वर्ष में 683280 युवतियों से बलात्कार होता है जबकि वहाँ सेक्स कोई बुरी बात ही नहीं मानी जाती। यहां तक कि युवतियों द्वारा युवकों से बलात्कार का भी काफी प्रतिशत है। यह रुग्ण और अपराधी समाज क्या सुखी हो सकता है?

फिर 18 वर्ष (व्यवस्क की न्यूनतम आयु) से पूर्व 21 प्रतिशत लड़कियां माँ बन जाती है अन्य 13 प्रतिशत विवाह से पूर्व माँ बन जाती है। 11 प्रतिशत की इसमें कोई वृद्धि तलाकशुदा व विधवा माताओं का हो जाता है। जहाँ 45 प्रतिशत सिंगल मदर्स हो वह समाज रुग्ण नहीं तो क्या है? जहाँ 51 प्रतिशत शादियाँ (जो मानवीय जीवन की पूर्णता का प्रतीक है) तलाक में तब्दील हो जाती हैं। जहाँ कहावत है कि कार बदलने से आसान पत्नी बदलना है। आत्महत्याओं में विकसित देशों में सबसे आगे तो जापान है पर प्रति लाख (12.2) की औसत से अमरीका भी पीछे नहीं। समाज में तनाव की कैसी स्थिति है कि 62.2 प्रतिशत लोगों को 6 घंटे की नींद भी ठीक से नहीं आती। शायद सर्वाधिक नींद की गोलियां अमरीका में बिकती है। 19.2 प्रतिशत के डिप्रेशन (जिनका गहन चिकित्सा में हैं) के साथ अमरीका विश्व में नम्बर दो पर है। एलजीबीटी यानि उभयलिंगी या समलैगिक अमरीका में 1 करोड़ के निकट हैं। लगभग 4 प्रतिशत (यह प्रकृति विरूद्ध कर्म गहन मानसिक विक्षिप्तता की स्थिति है। इसलिए यदि अमरीका को एक खुला बड़ा हस्पताल कहना अतिशयोक्ति नहीं।

निष्कर्ष है कि विकास की जो परिभाषा पश्चिम ने अपनाई वह त्रुटियुक्त व दोषपूर्ण है। भौतिक विकास और वह भी किसी प्रकार के पर्यावरण या प्रकृति का ध्यान न रखते हुए करना। आज अमरीका व पूरा पश्चिमी जगत चौराहे पर है। नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों – जिसके लिए सदा भारत जाना जाता रहा है – उस तरफ देखने को मजबूर है पश्चिमी जगत। हमने भी भौतिक विकास किया था बल्कि दुनिया में हम भी सर्वाधिक विकसित थे। 18वीं शताब्दी के प्रारंभ तक भी विश्व जीडीपी में भारत का योगदान 20 प्रतिशत तक रहा है।

अंग्रेजों की गलत नीतियों, परतंत्रता के कारण आज भारत बदहाल दिखता है। किन्तु क्योंकि भारत की विकास दृष्टि में भौतिक, नैतिक, आध्यात्मिक, पर्यावरण–प्रेमी सभी आयाम हैं। यह संतुलित है। इसलिए स्थिर व सुखी समाज भारत में वर्षों से रहता आया है जबकि अमरीका भौतिक दृष्टि से काफी आगे होते हुए भी सब तरह की परेशानियों से घिरा है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

समाचार परिक्रमा

देश में हर तीसरा व्यक्ति गरीब

देश में वित्त वर्ष 2011–12 के दौरान हर तीसरा आदमी गरीब था, जबकि एक साल पहले हर दस में चौथा व्यक्ति गरीबी की श्रेणी में आता था। पीएम की आर्थिक सलाहकार परिषद् के प्रमुख रहे चेयरमैन सी. रंगराजन की अध्यक्षता वाली एक समिति ने देश में गरीबी के स्तर के तेंदुलकर समिति के आकलन को खारिज कर और कहा है कि भारत में 2011– 12 में आबादी में गरीबों का अनुपात कहीं ज्यादा था और 29.5 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे थे। रंगराजन समिति के अनुसार, देश में हर 10 में से 3 व्यक्ति गरीब है। योजना मंत्री राव इंद्रजीत सिंह को सौंपी गई रिपोर्ट में रंगराजन समिति ने सिफारिश की है कि शहरों में प्रतिदिन 47 रुपए से कम खर्च करने वाले व्यक्ति को गरीब की श्रेणी में रखा जाना चाहिए, जबकि तेंदुलकर समिति ने प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 33 रपए का पैमाना निर्धारित किया था। रंगराजन समिति के अनुमानों के अनुसार, 2009–10 में 38.2 प्रतिशत आबादी गरीब थी जो 2011–12 में घटकर 29.5 प्रतिशत पर आ गई। ❑

आर्थिक पैकेज देने से नहीं सुधरेगी कृषि क्षेत्र की हालत

कृषि विशेषज्ञों के अनुसार देश में खेती–किसानी दरअसल न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाने अथवा राजनीतिक कारणों से दिए गए फौरी आर्थिक पैकेजों से नहीं सुधरेगी। इसके लिए मोदी सरकार को दीर्घकालीन कृषि नीति बनानी होगी। उसे बनाने से पहले किसानों, कृषि विशेषज्ञों और वित्तीय संस्थाओं के नुमाइंदों की कार्य समिति बनाकर गहरी पड़ताल करानी होगी। देश की करीब आधी आबादी को रोजगार देने और जीडीपी में कम से कम 25 प्रतिशत योगदान होने के बावजूद देश का कृषि क्षेत्र पिछले डेढ़ दशक से सुधार का मोहताज है। अंतरिम बजट के आंकड़ों के अनुसार पिछले दस साल में देश की सालाना कृषि पैदावार 21.3 करोड़ टन के मुकाबले जमीन के उतने ही रकबे पर पांच करोड़ टन बढ़कर 26.3 करोड़ टन हो गई है। जाहिर है कि देश की लगातार बढ़ती आबादी के अनुरूप अनाज, दाल, तिलहन और फल–सब्जियों की उपज निरंतर बढ़ाना जरूरी भी। किसानों द्वारा खून–पसीना बहाकर अधिक पैदावार देने के बावजूद किसानों के गले में कर्ज का फंदा निरंतर कसता जा रहा है। आज पंजाब, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और सुदूर केरल तक खेती में घाटा उठाकर किसान आत्महत्या कर रहे हैं। मौसम वैज्ञानिकों ने देश में कम बारिश होने का अनुमान बताया है। सूखे के दौरान लोगों को अनाज आदि की किल्लत से बचाने के लिए तो केंद्र सरकार सक्रियता तो दिखा रही है। इतना जरूर है कि कृषि कर्ज की दरों को यह मोदी सरकार सूखे की आशंका को देखते हुए कुछ सरल बना दे। ❑

देश में बढ़ रही गरीबी, शिशु मृत्यु दर

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में गरीबी, शिशु मृत्यु दर की समस्या लगातार बढ़ रही है। रिपोर्ट में 2012 में भारत में पांच साल की कम उम्र के बच्चों की सर्वाधिक मृत्यु हुई। इसी अवधि में 50,000 महिलाओं की मौत प्रसव के समय हुई। ❑

बेहतर खाद्य प्रबंधन से काबू में आएगी महंगाई : आरबीआई

भारतीय रिजर्व बैंक ने कहा कि वह मुद्रास्फीति पर नजर रखे हुए है और उसे उम्मीद है कि उचित खाद्य प्रबंधन से खाद्य कीमतों में कमी में मदद मिलेगी। आरबीआई के गवर्नर रघुराम राजन ने कहा है कि 'हम मुद्रास्फीति पर निगाह रखे हुए हैं। पिछले कुछ महीनों में मुद्रास्फीति पर खाद्य कीमतों का असर पड़ा है। उन्होंने कहा कि सरकार द्वारा उचित खाद्य प्रबंधन से खाद्य कीमतें कम हो सकती हैं।

एसबीआई के एक समारोह के मौके पर उन्होंने यह बता कही। साथ ही उन्होंने कहा कि सरकार और आरबीआई दोनों की इस पर नजर है और उन्हें इस संबंध में चौकस रहना होगा।' मौजूदा इराक संकट के बारे में राजन ने कहा कि यह चिंता का विषय है। इस संकट के कारण नियंत्रण स्तर पर कच्चे तेल की कीमत प्रभावित हुई है और रपए पर भी असर हुआ है। ❑

बढ़ती महंगाई

कम मानसून रहने और इराक में हिंसा और राजनीतिक तनाव बढ़ने से मुद्रास्फीति में और अधिक वृद्धि होने की संभावना है। विशेषज्ञों ने भी कहा है कि आने वाला समय जनता के लिए मुश्किल भरा होगा। देश में कमजोर मानसून और इराक में तनाव के चलते तेल की नियंत्रण कीमतों का बढ़ना जारी हो सकता है। सब्जी, फल और मोटे अनाज जैसी खाद्य वस्तुओं की कीमतों में तेजी के रुख से मई में थोक मुद्रास्फीति पांच महीने के उच्च स्तर 6.01 फीसद पर पहुंच गई। जबकि अप्रैल में यह 5.20 फीसद थी। ❑

अब भारतीय रेलवे में एफडीआई

रेल मंत्री सदानंद गौड़ा ने रेलवे के एक कार्यक्रम में कहा कि अब रेलवे में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) पर जल्द फैसला सरकारा लेनी वाली है। उन्होंने कहा कि आज रेलकर्मियों के सामने करो और मरो जैसी स्थिति है। यदि सामान्य सोच से आगे बढ़कर परिणाम देने वाली स्थितियां रेल में नहीं बनी तो रेलवे की स्थिति बेहतर नहीं होगी। बेहतर रेलवे व्यवस्था के लिए एफडीआई की जरूरत है। आज हमारे पास संसाधन कम हैं और रेलवे की प्राथमिकता है कि कुछ संसाधन जुटाए जाएं। ❑

90 प्रतिशत भारतीय धनी परोपकार काम के इच्छुक

एक निजी सर्वे के अनुसार भारत में ऐसे अमीरों का अनुपात अन्य देशों की तुलना में खास ऊंचा है जो अपनी ओर से स्थानीय समाज के लिए कुछ ठोस परोपकारी काम करना चाहते है जिनके बीच उन्होंने अपनी अरबों की संपत्ति कमाई है। रपट के अनुसार भारत में ऐसे अमीरों का अनुपात 90 प्रतिशत लोग अपने स्थानीय समुदाय को योगदान करना चाहते हैं। कैपजेमिनी और आरबीसी वेल्थ मैनेजमेंट द्वारा जारी विश्व संपत्ति रपट, 2014 में यह बात बताई गई है। रपट के अनुसार भारत में उच्च निवल मूल्य वाले लोगों ऐसे लोगों का अनुपात (90.5 प्रतिशत) सबसे ऊंचा है जो सामाजिक योगदान को या तो सबसे अधिक या बेहद महत्वपूर्ण मानते हैं। उसके बाद चीन (89.4 प्रतिशत) और इंडोनेशिया (89.2 प्रतिशत) का स्थान है। ❑

कारोबारी धारणा के मामले में भारत शीर्ष पर

शोध सलाह देने वाली एजेंसी ग्रांट थार्नटन की इंटरनेशनल बिजनेस की रिपोर्ट के अनुसार मोदी सरकार के आर्थिक विकास को गति देने के लिए सुधार प्रक्रिया में तेजी लाने की उम्मीद में नियंत्रण स्तर पर भारत की साख में सुधार आ रहा है। इस वर्ष की दूसरी तिमाही में भारत में कारोबारी धरणा 86 फीसद रही जबकि नियंत्रण औसत 46 प्रतिशत है। अब भारत कारोबारी धारणा के मामले में दुनिया में प्रथम स्थान पर पहुंच गया है। रिपोर्ट के अनुसार मोदी सरकार ने अर्थव्यवस्था को गति देने और विदेशी निवेश आकर्षित करने को अपने एजेंडे में शामिल किया है। सरकार ने देश में कारोबारी धारणा को मजबूत करने के लिए समावेशी विकास, नियामक सुधार और पारदर्शी नीतिगत माहौल तैयार करने का वादा किया है। रिपोर्ट में कारोबारी धारणा को बाधित करने वाले कुछ अवरोधकों को भी रेखांकित किया गया है जैसे कि 62 प्रतिशत कारोबारियों ने वित्त के अभाव की बात कही है। ❑

वैज्ञानिकों की अंतरिक्ष में नई उड़ान

भारतीय वैज्ञानिकों ने 30 जून को पीएसएलवी–सी–23 राकेट जरिए चार देशों के पांच उपग्रहों का सफलतापूर्वक प्रक्षेपण किया। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र (इसरो) के ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान पीएसएलवी– सी23 ने सभी पांच उपग्रहों को प्रक्षेपण के 17 से 19 मिनटों के भीतर एक–एक करके उन कक्षाओं में स्थापित कर दिया जहां इन्हें भेजे जाने का लक्ष्य रखा गया था। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अंतरिक्ष वैज्ञानिकों को बधाई दी। सेटेलाइट पीएसएलवी–सी 23 जिन पांच उपग्रहों को अपने साथ ले गया उनमें फ्रांस, जर्मनी, कनाडा, एनएलएस 7.2 तथा सिंगापुर के उपग्रह वेलोक्स–1 को प्रक्षेपित किया गया है। ❑

डेबिट कार्ड धोखाधड़ी में भारत को दूसरा स्थान

जहाँ लोगों के रोजमर्रा के जीवन को काफी आसान डेबिट और क्रेडिट कार्ड ने बना दिया है। वहीं इन कार्ड द्वारा होने वाली धोखाधड़ी की सूची भी लंबी होती जा रही है। डेबिट कार्ड धोखाधड़ी के मामले में दुनिया में भारत दूसरे स्थान पर है।

एक शोध एजेंसी एसीआई वर्ल्डवाइड की रिपोर्ट के मुताबिक भारत में डेबिट कार्ड धोखाधड़ी की दर 32 प्रतिशत मामले हैं जबकि वर्ष 2012 में यह 21 प्रतिशत था। अगर देखा जाए तो पिछले पांच वर्षों में पूरी दुनिया में चार में से एक उपभोक्ता इस तरह की धोखाधड़ी के शिकार हुए हैं। सर्वेक्षण में भारत के 41 प्रतिशत उपभोक्ताओं ने पिछले पांच वर्षो में उनके साथ धोखाधड़ी होने की बात मानी है। रिपोर्ट के मुताबिक इस मामले में पूरी दुनिया में संयुक्त अरब अमीरात पहले स्थान पर है और उसके बाद भारत, चीन और अमेरिका हैं। ❑

संसद में पहली बार 26 डॉक्टर

आज देश में वैसे तो डॉक्टरों की भारी कमी है लेकिन 16वीं लोकसभा में 26 डॉक्टर हैं। इन 26 डॉक्टरों में 17 एमडी या एमएस हैं जबकि दो आयुर्वेद के डॉक्टर बीएएमएस और एक होम्योपैथी एमडी है और अन्य एमबीबीएस हैं। देश की संसद में पहली बार इतने डॉक्टर लोकसभा में पहुंचे हैं। कुछ समय पहले आधे से अधिक सांसद कृषि या इससे जुड़े कार्यों के होते थे। लेकिन अबकी बार वकीलों, डॉक्टरों, इंजीनियरों और शिक्षाविदों की संख्या लोकसभा में बढ़ी हैं। ❑

बेहतर सुविधा न होने से हर साल हो रही फल-सब्जियां की बर्बादी

बेहतर परिवहन सुविधा न होने के कारण सालाना 4.5 अरब डॉलर का नुकसानहा रहा है जिसके कारण देश के कृषि उत्पादों के निर्यात भी घट रहा है। देश में आपूर्त्ति से जुड़ी बुनियादी सुविधाओं के अभाव में प्रति वर्ष फल एवं सब्जियां ग्राहकों तक पहुंचने से पहले ही नष्ट हो रहे हैं। यह एक बात सर्वे के द्वारा जारी की गई। इंस्टीट्यूट आफ मैकेनिकल इंजीनियर्स ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि कहा कि अत्याधुनिक कोल्ड चेन के माध्यम से खाद्य पदार्थों के अनावश्यक नुकसान को कम कर सकता है। संस्थान के ऊर्जा एवं पर्यावरण प्रमुख डॉ टिम फोक्स ने यहां रिपोर्ट जारी करते हुए कहा कि भारत से प्रति वर्ष 37 अरब डालर के अनाज का निर्यात होता है लेकिन उसमें वानिकी उत्पादों विशेषकर फल एवं सब्जियों की हिस्सेदारी मात्र 1.5 अरब डालर की है। उन्होंने कहा कि 50 फीसद अर्थात 4.5 अरब डालर के वानिकी उत्पाद आपूर्त्ति से जुड़ी बुनियादी सुविधाओं के अभाव में ग्राहकों तक पहुंचने से पहले ही खराब हो जाते हैं। ❑

ब्लैक मनी पर प्रेशर ना बनाए भारत : स्विस बैंक

मोदी सरकार ने स्विस बैंकों में जमा ब्लैक मनी को जल्द देश में लाना का वायदा जनता से जो किया है वह इतना इतना आसान नहीं लग रहा है। इस मामले में भारत के बनाए जा रहे दबाव के जबाव में स्विस बैंकों ने भारत से सीधे तौर पर कहा है कि वे भारतीय खाताधारकों और तथाकथित ब्लैक मनी से जुड़ी जानकारी हासिल करने के मामले में ज्यादा प्रेशर न बनाएं। भारत सरकार ने हाल में भी स्विस प्रशासन को लेटर लिखकर कहा है कि वे ब्लैक मनी से जुड़े जानकारी देने में कोताही न बरते। स्विस नैशनल बैंक की रिपोर्ट के अनुसार, स्विस बैंकों में पिछले दो सालों में 14,000 करोड़ रुपये भारतीयों ने जमा कराए है। यूबीएस और क्रेडिट स्विस में दो तिहाई खाते भारतीयों के हैं। इस बारे में दोनों बैंकों के प्रवक्ताओं का कहना है कि हम, खाताधारक बनाने और धन जमा कराने में इंटरनैशनल कानून का पालन करते हैं।

बीमा क्षेत्र में 49 प्रतिशत का प्रस्ताव

सरकार ने बीमा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की की सीमा बढ़ाकर 49 प्रतिशत करने की योजना बना रही है।साथ ही इसमें एक शर्त भी जोड़ी है कि विदेशी भागीदर के पास 26 प्रतिशत मताधिकार रहेगा। वित्त मंत्रालय ने अब विधेयक में संशोधन का प्रस्ताव किया है जो 2008 से लंबित है जिसमें एफडीआई की सीमा 49 प्रतिशत और विदेशी भागीदारों के लिए मताधिकार की सीमा 26 प्रतिशत कर दिया गया है। ऐसा बीमा कंपनियों की पूंजी की जरूरत पूरी करने के लिए किया है जिन्हें पूंजी की जरूरत बहुत अधिक होती है। प्रस्ताव के मुताबिक बीमा संयुक्त उद्यम का मुख्य कार्यकारी भारतीय भागीदार द्वारा नियुक्त हो जिसे नियामकों की मंजूरी प्राप्त हो। सूत्रों के अनुसार इस प्रस्ताव में यह भी तय किया गया है कि कंपनी के अधिकतर निदेशक भारतीय नागरिक हो। ❑

जरूरी दवा के लिए चीन पर निर्भर भारत

उद्योग संगठन एसोचैम के सर्वे के अनुसार देश के फार्मा उद्योग के 200 से ज्यादा देशों को दवाओं का निर्यात करने के बावजूद कई जरूरी दवाओं के लिए भारत आज भी चीन पर निर्भर है जो देखा जाए एक तरफ से खतरनाक स्थिति है। रिपोर्ट के अनुसार भारतीय कंपनियां ज्यादा मुनाफे वाली जटिल दवाओं पर अपना ध्यान केंद्रित कर रहीं है जिससे पुरानी और सरल फमरुलेशन वाली दवाओं का उत्पादन घटता जा रहा है। इन दवाओं के लिए दुनिया के कई अन्य देशों के साथ आज हम चीन पर निर्भर हो गए हैं जहां इनका भरपूर उत्पादन हो रहा है। रिपोर्ट के अनुसार यह सुखद स्थिति नहीं है क्योंकि चीन के साथ जिस तरह के हमारे संबंध हैं वह कभी भी भारत को इन दवाओं के निर्यात पर प्रतिबंध लगा सकता है या इनके दाम बढ़ा सकते हैं जिससे यहां मरीजों के लिए मुश्किलें खड़ी हो जाएगी। ❑

ईंधन सब्सिडी का सबसे ज्यादा अमीर उठा रहे

आर्थिक सर्वे के आधार पर सरकार ने भी माना है कि ईंधन सब्सिडी के मामले में गरीबों के मुकाबले अमीरों को सब्सिडी का सात गुना ज्यादा फायदा मिलता है। अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष के अनुसंधान पत्र 'भारत में ईंधन सब्सिडी के राजकोषीय एवं समाज कल्याण पर असर' का हवाला देते हुए सर्वेक्षण में कहा गया कि उनका लक्ष्य ठीक नहीं रखा गया था जिसकी वजह से इस सब्सिडी से 10 प्रतिशत सबसे अमीर परिवारों को देश के 10 फीसद सबसे गरीब परिवारों के मुकाबले सब्सिडी का 7 गुना अधिक फायदा मिलता है। ❑

रपट

आर्थिक संकट हल करने का प्रयास परंतु अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं है बजट 2014-15 : स्वदेशी जागरण मंच

दुर्भाग्यपूर्ण है कि पिछली सरकार की भांति इस सरकार ने भी बजट के माध्यम से एफडीआई और पोर्टफोलियो निवेश की नीति को ही आगे बढ़ाया है। देश में इस बात पर लगभग मतैक्य है कि बीमा क्षेत्र में 26 प्रतिशत विदेशी निवेश की अनुमति के बाद बीमा कंपनियों द्वारा उपभोक्ताओं का शोषण एवं लूटखसोट तो हुई ही है, साथ ही बीमा की प्रीमियम दरों में भी भारी वृद्धि हुई है। ऐसे में विदेशी निवेश की सीमा को 49 प्रतिशत करते हुए सरकार क्या संकेत देना चाहती है, स्पष्ट नहीं है।

यूपीए सरकार के 10 साल के आर्थिक कुप्रबंधन, भ्रष्टाचार और एफडीआई पोषित आर्थिक संवृद्धि के मॉडल में गरीबों की दुर्गति निहित थी, जिसके कारण पिछले 10 सालों में बेरोजगारी, विशेषतौर पर युवाओं में, इतनी बढ़ी कि आज देश में 25 से 34 आयु वर्ग में 4.7 करोड़ लोग बेरोजगार हो चुके हैं। उस शासन का अंत करते हुए देश की जनता ने अच्छे दिनों की आस में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में देश की बागडोर सौंपी है। यह जरूरी है कि हमारी 30 प्रतिशत जनसंख्या जो गरीबी रेखा से नीचे रहती है, उसको कमाने के पूरे अवसर मिले। जनगणना के आंकड़े बताते है कि आज के भूमंडलीकरण के इस युग में गरीबों, वंचितों, दलितों और आदिवासियों की जमीनें छिन रही हैं। इस प्रवृत्ति को रोकने की जरूरत है, इसके लिए आज के विकास का मॉडल बदला जाए। एफडीआई और बड़े कॉरपोरेट घरानों पर आश्रित विकास, रोजगार विहीन विकास है, गरीबी को बढ़ाने वाला है और वंचितों को उनके बचे–खुचे संसाधनों से भी विमुक्त करने वाला है। 10 जुलाई 2014 को संसद में प्रस्तुत बजट नई सरकार का पहला नीति दस्तावेज है। इससे अपेक्षा यह थी कि देश के समक्ष चुनौतियों, विशेषतौर पर मंहगाई, बेरोजगारी, मैन्यूफेक्चरिंग में गिरावट और रूपये को मजबूत करने संबंधी उपाय किए जायेंगे और इन सबके माध्यम से अच्छे दिनों की शुरूआत हो सकेगी।

स्वदेशी जागरण मंच यह मानता है कि वर्तमान सरकार को जो अर्थव्यवस्था विरासत में मिली है उसकी सेहत अच्छी नहीं है। भारी बेरोजगारी के अलावा सरकारी खजाना भी खाली है। हालांकि वित्तमंत्री ने कहा कि वे इस कारण से अपने मनमुताबिक आवंटन नहीं कर पायें। इसलिए संभव है कि सभी प्रकार की अपेक्षाएं इस बजट से पूर्ण न हो पाएं।

लेकिन 10 जुलाई को संसद में प्रस्तुत बजट नई सरकार के रोजगार युक्त विकास के मॉडल के वायदे के अनुरूप नहीं है। यह सही है कि इस बजट में विशेष आर्थिक क्षेत्रों को बढ़ावा देने, 8 राष्ट्रीय निवेश एवं मैन्यूफेक्चरिंग जोन बनाने दिल्ली, मुंबई, इंडस्ट्रीयल कॉरीडोर समेत 4 इंडस्ट्रीयल कॉरीडोरों का निर्माण, मुख्य मैन्यूफेक्चरिंग उद्योगों में अतिरिक्त क्षमता के निर्माण समेत कई उपाय बताए गए हैं, लेकिन रोजगार निर्माण के लिए नीतिगत बदलाव करने में यह बजट सफल नहीं कहा जा सकता।

बजट में मंहगाई दूर करने के उपायों का भी अभाव दिखाई देता है। आज महंगाई का प्रमुख कारण खाद्य पदार्थों का अभाव है। उसके लिए खेती और किसान के लिए विशेष प्रयास होने चाहिए थे। दुर्भाग्यपूर्ण है कि पिछली सरकार की भांति इस सरकार ने इस बजट में भी कृषि के लिए मात्र 1 प्रतिशत से भी कम का आवंटन किया है। किसानों को ज्यादा ऋण देने की बात कही गई है, उर्वरा के परीक्षण की भी बात हुई है। लेकिन वास्तव में खेती को लाभप्रद बनाने के लिए किसान को उचित मूल्य मिलना और उसकी लागत को घटाना जरूरी है, इसके बारे में कोई प्रावधान नहीं है। सर्वविदित है कि डेयरी आज किसान के लिए अतिरिक्त आमदनी का महत्वपूर्ण स्रोत है। लेकिन डेयरी विकास के लिए भी बजट में पर्याप्त व्यवस्था नहीं है। जरूरत इस बात की है कि डेयरी को भी कृषि का दर्जा दिया जाता।

दुर्भाग्यपूर्ण है कि पिछली सरकार की भांति इस सरकार ने भी बजट के माध्यम से एफडीआई और पोर्टफोलियो निवेश की नीति को ही आगे बढ़ाया है। देश में इस बात पर लगभग मतैक्य है कि बीमा क्षेत्र में 26 प्रतिशत विदेशी निवेश की अनुमति के बाद बीमा कंपनियों द्वारा उपभोक्ताओं का शोषण एवं लूटखसोट तो हुई ही है, साथ ही बीमा की प्रीमियम दरों में भी भारी वृद्धि हुई है। ऐसे में विदेशी निवेश की सीमा को 49 प्रतिशत करते हुए सरकार क्या संकेत देना चाहती है, स्पष्ट नहीं है।

प्रतिरक्षा के क्षेत्र में भी हालांकि सरकार ने 49 प्रतिशत के विदेशी निवेश

के साथ भारतीय प्रबंधन की अनिवार्यता की बात कही है, लेकिन इस क्षेत्र में विदेशी निवेश से संबंधित देश के कई वर्गों में काफी आपत्तियां हैं। इस संबंध में विचार विमर्श एवं राष्ट्रीय बहस की जरूरत है।

स्वदेशी जागरण मंच सरकार से अनुरोध करता है कि पिछली सरकार के रोजगार विहीन मॉडल को तिलांजलि देते हुए देश में रोजगार बढ़ाने वाले, गरीबी को दूर करने वाले मॉडल को अपनाए। प्रतिरक्षा और बीमा क्षेत्र में विदेशी निवेश की नीति पर पुनर्विचार करें। पीपीपी मॉडल के नाम पर अनावश्यक निजीकरण, जिससे उपभोक्ताओं का शोषण होने की संभावना हो, से बचा जाए। अभी तक अपनाई गई एफडीआई और पोर्टफोलियो निवेश की नीति के फायदे एवं नुकसानों पर एक श्वेत पत्र जारी हो और तब तक विदेशी निवेश की घोषित नीतियों को स्थगित रखा जाए। ❑

स्वदेशी जागरण मंच द्वारा बजट पूर्व परिचर्चा

स्वदेशी जागरण मंच द्वारा मोदी सरकार के पहले आम बजट से पूर्व परिचर्चा का आयोजन दिल्ली के दीनदयाल शोध संस्थान के सभागार में दिनांक 7 जुलाई 2014 को किया गया। अर्थशास्त्री डॉ. भरत झुनझुनवाला और उदयपुर के पेसिफिक विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा और पत्रकार डॉ. आर.बालाशंकर और प्रो. शिवाजी सरकार सरीखें वक्ताओं ने इस परिचर्चा में भाग लिया। हालांकि यह परिचर्चा 10 जुलाई को संसद में पेश होने वाले आम बजट के संदर्भ में थी, लेकिन इस परिचर्चा में जनहित, राष्ट्रहित में आगामी बजट में अपेक्षाओं पर तो चर्चा हुई लेकिन साथ ही साथ पूर्व सरकारों के आर्थिक कुप्रबंधन और जनविरोधी आर्थिक नीतियों पर भी जमकर चर्चा हुई।

परिचर्चा का प्रारंभ करते हुए स्वदेशी जागरण मंच के अखिल भारतीय सह–संयोजक डॉ. अश्विनी महाजन ने अर्थव्यवस्था में घटती ग्रोथ, बढ़ती गरीबी और बेरोजगारी, बढ़ते विदेशी भुगतान घाटे और मैन्युफेक्चरिंग में गिरावट पर चिंता व्यक्त करते हुए पिछले बजट में पूर्व सरकार के वित्तमंत्री श्री पी. चिदंबरम द्वारा खर्चों को छुपाते हुए और राजस्व में बनावटी वृद्धि करते हुए राजकोषीय घाटे को कम दिखाने का मुद्दा उठाया।

मंच के अखिल भारतीय सहसंयोजक प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा ने बताया कि पी. चिदंबरम ने जितने राजकोषीय घाटे की परिकल्पना की थी उसका 47 प्रतिशत वर्ष के पहले 2 महीनों में ही पूरा हो चुका हैं आगे चलकर यह घाटा कहीं ज्यादा हो सकता है, जिसके कारण महंगाई बढ़ सकती है। उन्होंने सरकारी खर्च युक्तिसंगत बनाने पर जोर दिया। उनका कहना था कि जिस प्रकार सरकार आमदनी बढ़ाने के लिए विनिवेश का सहारा लेना चाहती है, उसमें सरकारी व्यवसायिक प्रतिष्ठानों की बिक्री सही उपाय नहीं है। वैश्विक अनुभवों का हवाला देते हुए कहा कि दुनियाभर में सबसे अधिक लाभकारी विनिवेश का तरीका यह है कि घाटे वाली सरकारी कंपनियों सहित सभी सरकारी प्रतिष्ठानों में छोटे शेयर होल्डरों को शेयर बेचे जाएं। ऐसे में घाटे वाली कंपनियों के शेयर को भी ऊंची कीमत पर बेचकर धन जुटाया जा सकता है.

डॉ. भरतझुनझुनवाला ने देश में महंगाई के संदर्भ में बोलते हुए यह कहा कि हालांकि महंगाई चिंता का विषय है लेकिन यदि खाद्य वस्तुओं में महंगाई से किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य मिल पाता है तो हमें उस महंगाई को मान्य करना चाहिए लेकिन बड़ी–बड़ी कंपनियों द्वारा ऊंची कीमत पर सामान, चाहे वो साबुन हो या दवाईयां या कोई दूसरा साजो–सामान, बेचने पर नियंत्रण होना चाहिए। उनका कहना था कि किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य मिलेगा, तभी देश में खाद्य पदार्थ समुचित मात्रा में उपलब्ध हो पायेंगे। आज देश के विकास के लिए साधन संपन्न लोगों को त्याग करना होगा।

डॉ. आर. बालाशंकर ने विश्व बैंक और अन्य वैश्विक वित्तीय संस्थानों के षडयंत्रों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि उनके द्वारा पहले तो अर्थव्यवस्थाओं को ध्वस्त किया जाता है, और बाद में उन पर अनुचित शर्तें लादकर उन्हें और कमजोर किया जाता है। 1990 के दशक में यही सब कुछ हुआ। उन्होंने भूमंडलीकरण के नाम पर भारतीय संस्थानों की लूटखसोट पर चिंता व्यक्त करते हुए यह कहा कि इस सरकार को विदेशी निवेश के मोह से बाहर आकर देश के संसाधनों के आधार पर विकास करने की तरफ आगे बढ़ना चाहिए।

प्रो. शिवाजी सरकार ने रेलवे में विदेशी निवेश के आधार पर बुलेट रेल चलाने की योजना की आलोचना करते हुए यह कहा कि आज देश में आमजन के लिए बेहतर यातायात सुविधाएं उपलब्ध कराना सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए. अमीरों के लिए सुविधाएं जुटाने की बजाए

आमजन के लिए बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सुविधाएं ज्यादा जरूरी है।

स्वदेशी जागरण मंच के उत्तर क्षेत्र के सहसंयोजक श्री दीपक शर्मा 'प्रदीप' ने सरकारी नीतियों में बदलाव के साथ–साथ व्यवस्था परिवर्तन पर बल दिया। परिचर्चा के संयोजक चार्टड एकाउंटेंट श्री विनोद गोयल ने धन्यवाद ज्ञापित किया। संचालन अधिवक्ता राजीव कुमार ने किया। इस परिचर्चा में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सहप्रांत संघचालक डॉ. श्याम सुन्दर अग्रवाल, पूर्व प्रांत संघचालक रमेश प्रकाश, पूर्वी दिल्ली नगर निगम के मेयर मीनाक्षी, पूर्वी दिल्ली नगर निगम के स्टेंडिंग कमेटी के चेयरमेन उषा शास्त्री, संसद सदस्य राजेन्द्र अग्रवाल, स्वदेशी जागरण मंच के अखिल भारतीय सहसंयोजक सरोज मित्र, कमलजीत, अजय कुमार और गणमान्य व्यक्तियों में समाजसेवी, चार्टड एकाउंटेंट, प्राध्यापक, उद्योगपति आदि उपस्थित रहे। ❑

राष्ट्रीय विचार वर्ग-2014 (उ.भारत) कुमारहट्टी, हिमाचल में सम्पन्न

स्वदेशी जागरण मंच का राष्ट्रीय विचार वर्ग (उत्तर भारत) 27, 28, 29 जून 2014 को कुमारहट्टी, हिमाचल प्रदेश में सम्पन्न हुआ। जिसमें वर्ग प्रमुख प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा (राष्ट्रीय सहसंयोजक), वर्ग सह प्रमुख श्री दीपक शर्मा 'प्रदीप', श्री कृष्ण शर्मा एवं श्री सतीश जी रहे। व्यवस्था प्रमुख श्री नरोत्तम ठाकुर (प्रात संयोजक हि.प्र.) रहे। उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि श्री वीरेन्द्र कश्यप (सांसद सदस्य, शिमला) और अध्यक्षता श्री कृष्ण शर्मा (क्षेत्रीय संयोजक उत्तर क्षेत्र) ने की।

मंच का संचालन श्रीमति दिनेश गुलेरिया (राष्ट्रीय सह–संयोजक) ने किया। इसके अतिरिक्त श्री कश्मीरी लाल जी (अखिल भारतीय संगठक), डॉ. अश्विनी महाजन (राष्ट्रीय सह–संयोजक) और प्रो. भगवती प्रकाश शर्मा (राष्ट्रीय सह संयोजक) रहे। विषय प्रबोदन श्री सतीश जी (उत्तर क्षेत्रीय संगठक) द्वारा किया गया।

विचार वर्ग में आठ सत्र हुए और चार समानांतर सत्र हुए। स्वदेशी जागरण मंच की विकास यात्रा विषय पर श्री सतीश जी ने अपने विचार रखे। तकनीकी शब्दावली (आर्थिक, पर्यावरण शब्दावली) विषय पर कमल जी ने अपने विचार रखे।

जैव रूपांतरित फसल (जी.एम.फूड) विषय पर श्री कमलजीत ने जी.एम. फूड के के बारे में कहा कि जी और डी.एन.ए. हमारे शरीर की रचना को निर्धारित करते है। आज ऐसा वातावरण बन गया है आबादी बढ़ेगी तो अनाज की आपूर्त्ति कैसी होगी? हरित क्रांति के नाम पर हाईब्रीड फसल आई उनका विरोध नहीं हुआ था लेकिन आज हम कीमत चुका रहे हैं।

दैनन्दिन जीवन में स्वदेशी विषय पर गोविन्दराम जी और श्री कश्मीरी लाल जी ने अपने विचार रखे। मीडिया विषय पर श्री कमल जीत ने अपने विचार रखे। उन्होंने कहा कार्यक्रमों और आंदोलन की जानकारी हम व्हाट्सअप द्वारा एक दूसरे को शीघ्र से शीघ्र पहुंचा सकते हैं।

प्रथम समानांतर सत्र में डब्ल्यू.टी.ओ. विषय पर बलराम नन्दवानी जी और प्रो. भगवती जी ने अपने विचार रखे। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश विषय पर सत्र में डॉ. अश्विनी महाजन ने कहा कि मंच अपने स्थापना काल से जिन मुद्दों पर लड़ाई लड़ रहा है उनमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्रमुख है।

द्वितीय समानान्तर सत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश/फॉरन इंस्टीटयूशनल इन्वेस्टमेंट विषय पर डॉ. संजय सोनी और मुख्य वक्ता डॉ. अश्विनी महाजन जी ने अपने विचार रखे।

स्वदेशी जागरण मंच की विकास यात्रा व स्वदेशी पत्रिका अभियान विषय पर शक्तावत जी, श्री भोलानाथ मिश्र जी, राजीव जी और डॉ. अश्विनी महाजन जी ने अपने विचार रखे।

तृतीय समानान्तर सत्र में स्वदेशी चिकित्सा, भारतीय अर्थव्यवस्था में परिवार की भूमिका विषय पर श्री राजकुमार जी और श्री अनुपम जी ने अपने विचार रखे।

चतुर्थ समानान्तर सत्र में एकात्ममानव दर्शन एवं पं. दीनदयाल उपाध्याय व दत्तोपंत ठेंगड़ी विषय पर श्री धर्मेन्द्र दुबे, श्री सतीश जी और कश्मीरी लाल जी ने अपने विचार रखे।

नव उदारवादी आर्थिक नीतियों के 20 वर्ष का लेखा–जोखा पर श्री भगवती प्रकाश शर्मा पर अपने विचार रखे। उन्होंने कहा हम उदारीकरण की नीति को छोड़कर विश्व की नम्बर 1 अर्थव्यवस्था बन सकते हैं। हमारे पास विश्व की सबसे ज्यादा कृषि योग्य भूमि है। विकसित देशों में बढ़ रही बुजुर्गों की आबादी के कारण 5.7 करोड़ युवाओं के लिए खाली होगा इसकी आपूर्ति भारत जैसे युवा देश से की जा सकती है। आर्थिक उदारीकरण की जगह आर्थिक राष्ट्रवाद आ रहा है। ❑